वैज्ञानिक

ी विज्ञान साहित्य परिषद की पत्रिका

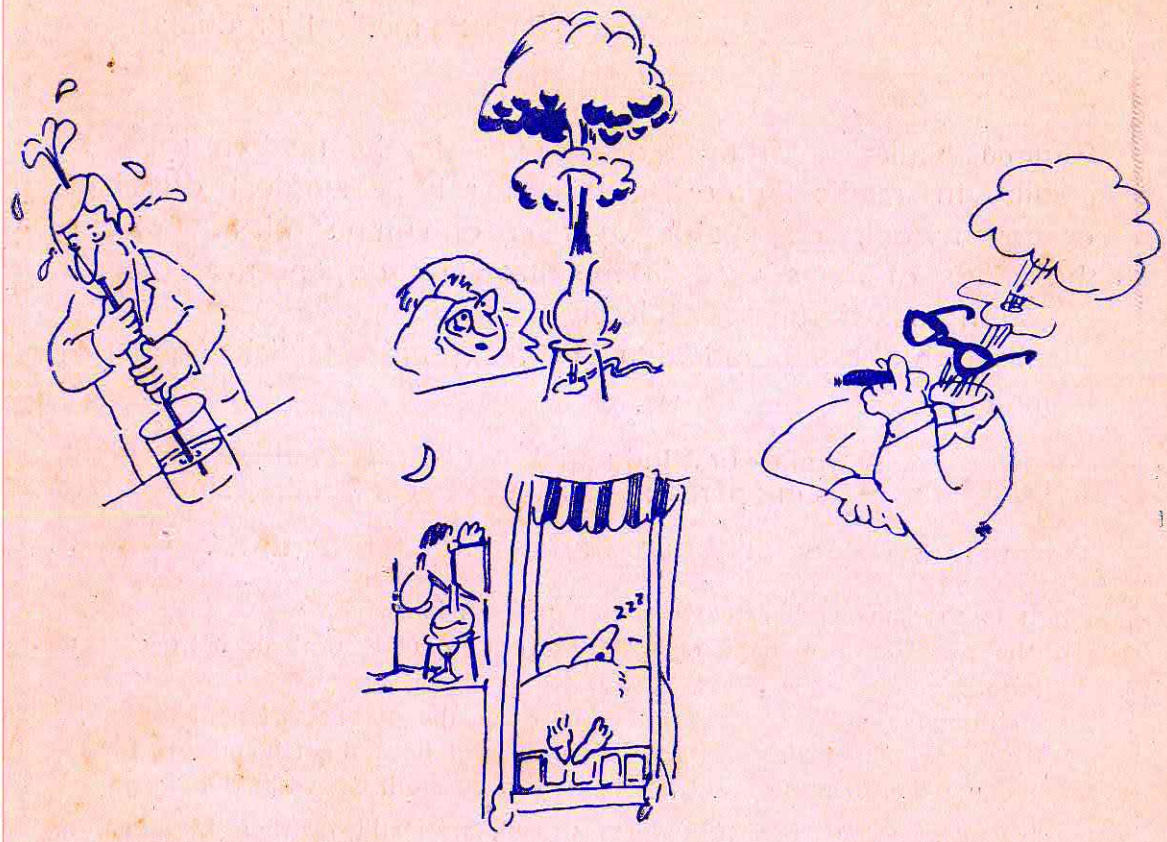

रासायनिक प्रयोगशाला में असावधानी !

ूबर–दिसंबर 1985

17 अंक 4

2-50 रु.

What has ATOMIC ENERGY got to do with surgical dressings
or cottonwool ?
sutures ?
catheters ? .....
plastic syringes ?
pharmaceutical packaging material ?
or, a host of other
ready-for-use medical products

PLENTY

Gamma radiation from radioisotopes is the modern route to sterility in medical products Whether it be surgical dressings or cottonwool, disposable syringes or sutures, or any of the thousands of items used in hospitals and dispensaries, gamma radiation makes them absolutely safe and sterile.
Sterilisation through radiation is already an established practice in india.

isomed Asia's first Industrial Radiation Sterilisation Plant is in operation at Trombay near Bombay since 1973.

What is so special about Radiation Sterilisation ?

- ☐ It is the most reliable sterilisation process known
- ☐ The penetrating gamma rays sterilise your products in their final packaged form.
- ☐ So long as the packaging remains intact, the products. remain sterile.
- ☐ This is a cold process. Radiation does not raise the temperature of the product. So, thermo plastic products can be sterilised without damage.

If you have any medical products to sell, try sterilising them by radiation. Get in touch with.

isomed

Bhabha Atomic Research Centre, Trombay, Bombay 400 085.

अखिल भारतीय विज्ञान लेख प्रतियोगिता 1986

'हिंदी–विज्ञान साहित्य परिषद' तथा राजभाषा कार्यान्वयन समिति (भा. प. अ. केंद्र), के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित हिंदी विज्ञान लेख प्रतियोगिता हेतु प्रतिष्टियां आमंत्रित हैं :

—: विषय :—

न्यूक्लीय विज्ञान, भौतिकी, रसायनिकी, जीवविज्ञान, भूगर्भ विज्ञान, अंतरिक्ष विज्ञान, मौसम विज्ञान, इंजीनियरी, चिकित्सा आदि से संबंधित कोई भी विषय चुना जा सकता है.

शब्द संख्या : अधिकतम 2000 शब्द (लेख की दो प्रतियां भेजें)

—: पुरस्कार :—

*** प्रथम – 500 रु. * द्वितीय – 250 रु. * तृतीय – 150 रु.**

इसके अतिरिक्त चार प्रोत्साहन पुरस्कार और अहिंदी भाषी प्रतियोगियों को एक विशेष पुरस्कार दिया जायेगा. ऐसे प्रतियोगी अपनी मातृभाषा का स्पष्ट उल्लेख करें.

अंतिम तिथि : 31 अगस्त 1986

लेख भेजने का पता :

संपादक 'वैज्ञानिक',
हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद,
सूचना प्रभाग, सेंट्रल कॉम्प्लेक्स,
भाभा परमाणु अनुसंधान, केंद्र बंबई 400 085.

विशेष : सभी पुरस्कृत रचनाओं को हिं. वि. सा. परिषद द्वारा प्रकाशित अखिल भारतीय पत्रिका 'वैज्ञानिक' में प्रकाशित किया जायेगा. 'वैज्ञानिक' हेतु अन्य रचनाएं भी आमंत्रित हैं.

सभी प्रकाशित सामग्री पर पारिश्रमिक दिया जाता है.

हिंदी - विज्ञान साहित्य परिषद

पंजीकरण संख्या : BOM 64/70 GBBSD
25–4–1970

ट्रस्ट पं. संख्या : F 2005 बंबई

कार्यकारिणी

(1985-1986)

डॉ. पी. के. अय्यंगार	—	अध्यक्ष
डॉ. एस. एस. राममूर्ति	—	उपाध्यक्ष
राम निवास आर्य	—	सचिव
डॉ. सूर्य देव मिश्र	—	सहसचिव
तीरथ जे. असनानी	—	कोषाध्यक्ष
डॉ. भगवान कृष्ण गौड़	—	सदस्य
डॉ. राजेंद्र स्वरूप	—	सदस्य
डॉ. ललित हरि शर्मा	—	सदस्य
ज्ञान प्रकाश श्रीवास्तव	—	सदस्य
विनय कुमार श्रीवास्तव	—	सदस्य
अमर नाथ दुबे	—	सदस्य

मनोनीत सदस्य

एम. आर. बालकृष्णन

डॉ. हर स्वरूप शर्मा

वैज्ञानिक

वर्ष : 17 अंक 4

अक्तूबर–दिसंबर 1985

व्यवस्थापन मंडल

डॉ. उमेश चंद्र मिश्र
राम निवास आर्य
तीरथ जे. असनानी
राजेश चंद्र मित्तल
योगेंद्र देव वशिष्ठ
श्रीमती वासंती अय्यर

संपादक

डॉ. सत्य नारायण त्रिपाठी
डॉ. माधव सक्सेना 'अरविंद'
आइवन बी. राम
कु. कृष्णा मिश्रा

कार्यालय

'वैज्ञानिक'
हिंदी–विज्ञान साहित्य परिषद,
सूचना प्रभाग, सेंट्रल कॉम्प्लेक्स,
भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र,
बंबई–400 085.

शुल्क

भारत में

	संस्थागत	व्यक्तिगत
एक वर्ष –	15 रु.	10 रु.
तीन वर्ष –	40 रु.	25 रु.
आजीवन –	150 रु.	100 रु.

विदेश में
(समुद्री डाक द्वारा प्रेषण)

	संस्थागत	व्यक्तिगत
एक वर्ष –	25 रु.	15 रु.
तीन वर्ष –	70 रु.	40 रु.

लेख

- रोबटिक्स के मूल तत्व और प्रयोग 7
  —अरविंद कुमार जोशी
- रासायनिक प्रयोगशाला में सुरक्षा 12
  —डॉ. देवकी नंदन
- आधुनिक औषधि विज्ञान 19
  —आभिता सुरेन
- भारत में अंकगणित का विकास 23
  —कुमार नीरज
- आइए, परमाणु के भीतर झाँककर देखें–II 28
  —जनार्दन स्वरूप

स्तंभ

- संपादकीय 4
- बुद्धि कौशल की परख 36
- सिद्धांत/सूत्र/समीकरण 37
- बना कर देखें 39

पत्रिका में लेखकों द्वारा व्यक्त विचारों से हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद अथवा संपादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है. पत्रिका में प्रकाशित समस्त सामग्री के सर्वाधिकार परिषद के पास सुरक्षित हैं.

संपादकीय

ब्रह्मांड के सिमटते रहस्य

पहली बार जब आदिमानव ने अंतरिक्ष को देखा था तब उसे ब्रह्मांड उतना रहस्यमय नहीं लगा होगा, जितना अब गूढ़ होता जा रहा है. ज्ञान–विज्ञान की सीमाएं जिस तेजी से बढ़ रही हैं उसकी असंख्य गुनी तेजी से ब्रह्मांड की विविधता और सीमाएं बढ़ रही हैं. अतः ब्रह्मांड का गूढ़तर होना अनिवार्य एवं स्वाभाविक है. हमारी दृष्टि की दिव्यता और क्षमता थोड़ी बढ़ती है तो ब्रह्मांड के रहस्यों की पोटली और बड़ी होती जाती है. शायद इसी आभास से विशाल एवं असंख्य नक्षत्रावलियों के सह-अस्तित्व में विराट ब्रह्मांड का दर्शन करने वाले हमारे ऋषि–मुनि एवं साधु–संतों ने मनुष्य को 'क्षुद्र प्राणी' की संज्ञा दी थी.

कोरी आंखों से तो मनुष्य सूर्य, चंद्रमा, पांच ग्रह तथा लगभग छः हजार तारे ही देख सका था तैत्तिरीय ब्राह्मण के अनुसार हमारे ऋषि भी कृत्रिका–पुंज में केवल सात तारे ही पहचान पाये थे. पर गैलीलियो की दूरबीन से हम कृत्रिका पुंज में 36 तारे देखने में समर्थ हुए. शक्तिशाली दूरबीनों के आविष्कार से तो आज हम 300 से भी अधिक तारे देख सकते हैं. हमारी आंखें दृश्य प्रकाश को ही देख सकती हैं. अतः हम केवल उन्हीं सुदूर पिंडों को ही देख सकते हैं जिनका प्रकाश हम तक सीधे या शक्तिशाली दूरबीनों के माध्यम से पहुंचता है. अन्य सुदूरस्थ पिंडों को हम अपनी आंखों से नहीं देख सकेंगे. ब्रह्मांड के अधिक भाग को आंखों से देखने की लालसा ने ही इस वर्ष 94 इंच की प्रकाश दूरबीन को 500 कि. मी. ऊपर अंतरिक्ष में स्थापित करने के लिए प्रेरित किया है. इससे बहुत से कम चमकने वाले स्रोत पिंड देखे जा सकेंगे. यह भी अनुमान लगाया जाता है कि इस दूरबीन की मदद से ब्रह्मांड में लगभग 14 अरब प्रकाश-वर्ष की दूरी तक देखना संभव होगा.

ब्रह्मांड के पिंडों से प्रकाश के अतिरिक्त अन्य किरणें भी निकलती हैं जो अंतरिक्ष में हजारों लाखों, करोड़ों वर्षों तक यात्रा करने के बाद पृथ्वी के वायुमंडल की ऊपरी सतह पर पहुंचती हैं. धरातल तक केवल प्रकाश–किरणें तथा अधिक तरंगलंबाई की रेडियो किरणें ही पहुंच पाती हैं. पराबैंगनी, एक्स और गामा किरणें वायुमंडल की कुछ ऊपरी परतों में ही सोख ली जाती हैं अतः धरातल तक नहीं पहुंच पातीं. यह तथ्य सर्वविदित है कि प्रकाश की उपस्थिति में ही हम पिंडों को देख पाते हैं क्योंकि हमारी आंखें प्रकाश के प्रति संवेदनशील हैं. मनुष्य की आंखें पराबैंगनी, एक्स, गामा अथवा अवरक्त किरणों के प्रति संवेदनशील नहीं हैं

इसीलिए हम इन किरणों को देख नहीं पाते. यदि हमारे पास ऐसी आंखें या युक्तियां हों जो इन अदृश्य किरणों को ग्रहण कर सकें तो हम उन सुदूरस्थ पिंडों तक पहुंच सकते हैं जहां प्रकाश-दूरबीन की सहायता से भी आंखें नहीं देख सकती हैं. इन्हीं संभावित युक्तियों के विकास में ही ब्रह्मांड को समग्र रूप में देख सकने की संभावना छिपी हुई है. इसी परिकल्पना ने रेडियो, एक्स, अवरक्त, पराबैंगनी तथा गामा किरण खगोल विज्ञान को जन्म दिया. प्रकाश और रेडियो दूरबीनों से प्रसरणशील ब्रह्मांड के उन स्रोतों का पहली बार पता चला जो अपरिमित मात्रा में ऊर्जा दे रहे हैं तथा निरंतर दूर जा रहे हैं. इन स्रोतों को 'क्वासरों' का नाम दिया गया है तथा खगोलशास्त्रियों का अनुमान है कि ये क्वासर ब्रह्मांड के सीमांत पर हैं. ब्रह्मांड की उत्पत्ति की कल्पना एक महाविस्फोट से की जाती है. इस विस्फोट के समय उत्पन्न हुए विकिरणों के अवशेष 'माइक्रोवेव विकिरण' को खोज निकालने में भी रेडियो खगोल विज्ञान ने महत्वपूर्ण योगदान दिया है. इसी आधार पर अनेक खगोल भौतिक शास्त्री महाविस्फोट के बाद के कुछ क्षणों तक व्याप्त भौतिक परिस्थितियों का आकलन कर रहे हैं. संसार की सर्वाधिक शक्तिशाली रेडियो दूरबीन 'वेरी लार्ज अरे' न्यू मेक्सिको के रेगिस्तान में लगी हुई है. इसमें 27 बड़े-बड़े एंटेना लगे हैं जो लगभग 21 किलो मीटर लंबी रेल की पटरी परिस्थित हैं. आशा है इससे अंतरिक्ष के बहुत से रहस्यों का उद्घाटन होगा.

एक्स, पराबैंगनी तथा गामा किरणें धरातल तक नहीं पहुंच पाती हैं. अतः इन्हें ग्रहण करने के लिए यंत्रों को रॉकेटों या उपग्रहों में रखकर अंतरिक्ष में भेजा जाता है. एक्स किरणों के माध्यम से पिछले दो दशकों में कई एक्स रे स्रोतों का पता चला है. इनमें से कुछ तो अत्यंत अद्भुत हैं. जो तारे अपने जीवन की संध्या में बहुत सिकुड़ कर तेजी से घूमने लगते हैं उनमें से रेडियो तथा एक्स किरणें निकलती हैं. ऐसे अनेक 'न्यूट्रॉन तारों' का पता चला है. कुछ तारे ऐसे भी हैं जो अपने जीवन काल के अंतिम क्षण में सिकुड़ कर इतने छोटे हो जाते हैं तथा उनमें द्रव्य इतना सघन हो जाता है कि किसी भी प्रकार का विकिरण बाहर नहीं निकल पाता. तारों की इस स्थिति/मुद्रा को 'कृष्ण विवर' (ब्लैक होल) का नाम दिया गया है. अदृश्य होने के कारण इसको पहचानने का एकमात्र साधन एक्स-रे खगोल विज्ञान ही था. प्रायः ब्रह्मांड में जुड़वां तारों में एक बड़ा तारा और दूसरा घनीभूत कृष्णविविर होता है. कृष्ण विवर में गुरुत्वाकर्षण अत्यंत अधिक होने के कारण वह बड़े तारे के द्रव्य को निरंतर निगलने का प्रयास करता रहता है. जब यह प्रयास सफल हो जाता है तो बड़े तारे की द्रव्यराशि तेजी से चक्कर लगाती हुई कृष्ण विवर में समा जाती जाती है तथा इस दौरान शक्तिशाली एक्स विकिरण निकलते हैं. इन्हीं शक्तिशाली विकिरणोंको ग्रहण करके ही कृष्ण विवरों के अस्तित्व को पहचाना गया. 1983 में अंतरिक्ष में स्थापित 'उहूरू' नामक एक्स-रे उपग्रह तथा 1978 में छोड़ी गयी 'आइंस्टाइन वेधशाला' एक्स-रे खगोल विज्ञान की प्रगति के प्रतीक हैं.

अवरक्त किरणों का योगदान खगोलविज्ञान के लिए और भी अनूठा रहा है. 1983 में अंतरिक्ष में छोड़े गये उपग्रह 'इरास' से हमें नीहारिकाओं, धूमकेतुओं, तारों के वलयों एवं जन्म ले रहे तारों के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी मिली है तथा इससे ब्रह्मांड का एक रोमांचक पक्ष सामने आया है. कई तारों के इर्द गिर्द द्रव्यराशि के वलय पाये गये हैं जिनसे ग्रहों का निर्माण हो सकता है. इतना ही नहीं अभिजित तारों के चारों ओर ठीक उसी प्रकार के वलय हैं जैसे सौर मंडल बनने के पहले सूर्य के चारों ओर थे. इससे एक स्पष्ट संकेत और प्रबल संभावना यह उभरती है कि सभी तारों के अपने-अपने

ग्रह मंडल हो सकते हैं. अतः ब्रह्मांड में हमारे अतिरिक्त करोड़ों-अरबों सभ्यताएं हो सकती हैं.

पिछले कुछ सालों में अंतरिक्ष से पृथ्वी पर गिरे उल्कापिंडों की रासायनिक जांच से उनमें अमीनो अम्लों सहित कई कार्बनिक अणुओं के होने के प्रमाण मिले हैं. जीवित पदार्थों में ये अमीनो अम्ल ही जीवन के मूलभूत द्रव्य प्रोटीनों की रचना इकाइयां होते हैं. अरिजोना प्रांतीय विश्वविद्यालय के जान क्रोनिन और सांड्र पिज़ारेलो की हाल ही में प्रकाशित रिपोर्ट के अनुसार 52 विभिन्न अमीनो अम्लों की पहचान उल्कापिंडों में की गयी है तथा इनमें से 33 पृथ्वी पर नहीं पाये जाते. इन उल्कापिंडों में एडेनीन, गुआनीन, साइटोसीन, थाइमीन तथा यूरेसिल रसायनों की उपस्थिति की पुष्टि की गयी है. इनमें से पहले चार तो 'डी एन ए' की रचना इकाइयां हैं जब कि पांचवे से जीवन का दूसरा मौलिक घटक 'आर एन ए' बनता है. पर इन रसायनों का अस्तित्व जीवन के होने का पर्याप्त प्रमाण नहीं है क्योंकि यह भलीभांति मालूम है कि कुछ अमीनो अम्ल कई विधियों द्वारा बनाये जा सकते हैं. इस समय इस बात का कोई सबूत नहीं है कि ये उल्का-पिंड उन बृहद् पिंडों से निकले हैं जहां जीवन था. ब्रह्मांड में पृथ्वी के अलावा अन्यत्र जीवन है या नहीं— यह प्रश्न तब तक पहेली बना रहेगा जब तक रासायनिक विकास से जैव विकास का क्रम सिद्ध नहीं हो जाता. इस क्रम के ज्ञान के अभाव में ऐसी भी धारणाएं हैं कि धरती की आदिम अवस्था जीवन के लिए अनुकूल नहीं थी, अतः पृथ्वी पर जीवन का अवतरण बाह्य अंतरिक्ष से हुआ होगा. फ्रेड हायल का मत है कि धूमकेतु पृथ्वी के वायुमंडल में विविध प्रकार के जीवाणु छोड़ते रहते हैं. संभवतः पृथ्वी पर जीवन की उत्पत्ति के कारण ये जीवाणु ही हों!

एक बात निश्चित है कि जिस दिन रासायनिक विकास से जैव विकास की पुष्टि होगी सारी अटकलबाज़ियों का अंत हो जायेगा. एक नया प्रश्न उभरेगा पूरे ब्रह्मांड की संस्कृतियों के परिप्रेक्ष्य में हमारी मान्यताओं एवं संस्कृति की सार्थकता का.

दूसरा महत्वपूर्ण प्रश्न होगा कि क्या बाह्य अंतरिक्ष की संस्कृतियां आज भी जीवित हैं?

पृथ्वी पर विकसित तकनीकी सभ्यताओं को देखकर तो यही लगता है कि उन्नत तकनीकी महाप्रलय के द्वार खोलती है तथा आत्मविनाश ही जैव विकास की चरम परिणति है. अतः यदि यह मान लिया जाये कि बाह्य अंतरिक्ष की सभ्यतायें अति उन्नत हैं तो यह कहना होगा कि आज वे जीवित नहीं होंगी. यदि जीवित होंगी तो हमसे कम उन्नत होंगी. यदि वे अति उन्नत और जीवित हैं तो निश्चित ही पार्थिव सभ्यताओं से अत्यंत श्रेष्ठ होंगी तथा वहां विवेक का साम्राज्य होगा. इन तमाम आशंकाओं का समाधान संभवतः कार्ल सेगन अपनी शोध परियोजनाओं में पा सकें.

—डा. सत्यनारायण त्रिपाठी

लेख प्रतियोगिता (1985) में प्रथम पुरस्कार प्राप्त

रोबटिक्स के मूल तत्व और प्रयोग

अरविंद कुमार जोशी

कम्प्यूटर केंद्र, बी. एच. ई. एल, हरिद्वार 249403

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी दोनों एक दूसरे की प्रगति के परिपूरक रहे हैं. विज्ञान ने परिकल्पनाओं का संसार रचा है तो प्रौद्योगिकी ने उसे मूर्त एवं स्थूल आकार दिया है. मनुष्य ने शारीरिक श्रम कम करने की बात सोची तो यंत्रों का आविष्कार हुआ. इस आविष्कार ने एक ऐसे अन्य आविष्कार की कल्पना को जन्म दिया जिससे मानसिक श्रम को कम किया जा सके और परिणाम था संगणक. यह सब कुछ कर लेने के बाद मनुष्य ने पलट कर अपनी ओर देखा और विचार आया कि अपना ही प्रतिरूप क्यों न बना डालें जिसमें दोनों लक्ष्य साथ ही पूरे हो जायें. इसी मनःस्थिति में सूत्रपात हुआ यंत्र मानविकी की परिकल्पना का. प्रस्तुत लेख में श्री अरविंद कुमार जोशी यंत्रमानव के महत्त्वपूर्ण पक्षों तथा अभिकल्पनों का विवरण प्रस्तुत कर रहे हैं. —स

यंत्रमानव (रोबट) की कल्पना कैसे जन्मी ?

यंत्रों के आविष्कार ने मनुष्य को कठोर शारीरिक श्रम से मुक्ति दिलाई और कंप्यूटर के आविष्कार ने दुहरावट भरे मानसिक श्रम से. पर ये दोनों क्षमताएं अलग-अलग रूप में इतनी फलदायिनी नहीं सिद्ध हुईं. यंत्रों को निर्देश देने के लिए आदमी की उपस्थिति अपरिहार्य थी, क्योंकि यंत्रों में स्वयं निर्णय लेने की क्षमता बिलकुल नहीं थी. दूसरी ओर कंप्यूटर में निर्णय लेने की बौद्धिक क्षमता तो भरी जा सकती थी, पर वह शारीरिक श्रम करने में असमर्थ था. इंजीनियरों ने इन दोनों क्षमताओं के गठबंधन का प्रयास किया. फलतः सामने आयी संगणकीकृत अंकतः नियंत्रित (कंप्यूटराइज्ड न्यूमरिकली कंट्रोल्ड) मशीनें.

पर इंजीनियरों का स्वप्न अभी पूरा नहीं हुआ था, क्योंकि वे तो आदमी का चलता-फिरता प्रतिरूप बनाना चाहते थे, जबकि ये मशीनें तो जहां एक बार स्थापित कर दी जातीं, वहीं खड़ी रहती थीं. परिणामस्वरूप यंत्रमानव की परिकल्पना ने आकार ग्रहण किया.

आविष्कार से अब तक यंत्रमानव के स्वरूप म निरंतर परिष्कार होता गया है. यंत्रमानव मानव-निर्मित अतिमानव है. वह कायिक व मानसिक सामर्थ्य में आदमी को कई गुना पीछे छोड़ गया है. वह महीनों बिना थके, बिना ऊबे और बिना विश्राम किये काम कर सकता है. वह बड़ी से बड़ी गणनाएं पलक झपकते कर लेता है. वह परमाणु भट्टियों में उतरकर काम कर लेता है, जहां विकिरण से डरा मानव उतरने का साहस नहीं कर सकता. वह सागर की उन गहराइयों में खोजबीन कर सकता है, जिनमें पानी के दाब के कारण आदमी जा ही

नहीं सकता. वह स्वास्थ्य के लिए हानिकारक गैसों के बीच भी काम कर लेता है.

पर इस अतिमानव की, मानव पर राज्य करने की कोई महत्वाकांक्षा नहीं है. वह मानव का दासानुदास ही बना रहना चाहता है. आखिर सृष्टि अपने स्रष्टा से बड़ी हो भी कैसे सकती है?

यंत्रमानव : परिभाषा

यंत्रमानव एक कार्यक्रमित कर्मक (प्रोग्राम्ड मेनिपुलेटर) है जो मानव की सहायता के बिना स्वतःचालित रूप से उपयोगी काम कर सकता है.

यंत्रमानव की कायिकी (एनैटमी) और कार्यिकी (फिजिऑलॉजी) :

सभी यंत्रमानवों में समान रूप से पायी जाने वाली प्रणालियां ये हैं :

- **कर्मक (मेनिप्युलेटर) या यांत्रिक इकाई : में सारे काम करती हैं.**
- **नियंत्रक (कंट्रोलर) यह यंत्रमानव का 'मस्तिष्क' है. जिसमें कर्मक को संचालित करने के लिए सारे आवश्यक आंकड़े व निर्देश संगृहीत होते हैं.**
- **शक्ति–आपूर्ति (पॉवर सप्लाई) : यह कर्मक व नियंत्रक को ऊर्जा देती है.**

कर्मक :

इसे यंत्रमानव का 'हाथ' ही कहना चाहिए. जिस तरह हमारे हाथ में हड्डियों की एक कड़ी होती है, जो जोड़ों पर जुड़ी रहती है, उसी तरह कर्मक में भी जोड़ और कड़ियां होती हैं जो कई दिशाओं में सचल हो सकती हैं. सचलता के लिए वायवीय बेलन (न्यूमेटिक सिलिंडर), द्रव बेलन (हाइड्रॉलिक सिलिंडर) या विद्युत मोटरों का प्रयोग किया जाता है.

नियंत्रक :

नियंत्रक के काम हैं :

- **वांछित क्रम में और वांछित बिंदुओं पर कर्मक को सचल करना या रोकना,**
- **कर्मक किस स्थिति में है, यह 'याद' रखना व**
- **परिवेश और यंत्रमानव के बीच मध्यस्थता करना.**

कर्मक के जोड़ों और कड़ियों की स्थितियां पश्चप्रेषण यंत्रों (फीडबैक डिवाइसेज) द्वारा संवेदी जाती हैं और नियंत्रक को भेजी जाती हैं. सीमा-खटके (लिमिट स्विचेज), विभवमापी (पोटेंशियोमीटर), कूटक (इनकोडर) जैसे स्थिति मापी यंत्रों और चक्र मापी (टैकॉमीटर) आदि का उपयोग पश्चप्रेषण यंत्रों के रूप में किया जाता है. इनमें से विभवमापी जैसे कुछ यंत्रों से प्राप्त सूचना अनुरूपी (ऐनलॉग) होती है, तो कूटक जैसे कुछ यंत्रों से प्राप्त सूचनाएं आंकिक (डिजिटल).

छोटे नियंत्रक, चरण–क्रमदों (स्टेप सिक्वेंसर) जैसे सरल उपकरणों से बने होते हैं. इनसे बने यंत्रमानवों को अ–नियमन (नॉन सर्वो) यंत्रमानव कहते हैं. दूसरी प्रकार के यंत्रमानवों को स–नियमन (सर्वो कंट्रोल्ड) यंत्रमानव कहते हैं. इनमें जटिल नियंत्रकों का प्रयोग किया जाता है.

जटिल नियंत्रक बनाने के लिए सूक्ष्म–संसाधित्र (माइक्रो प्रॉसेसर) या लघु संगणक (मिनी कंप्यूटर) की जरूरत पड़ती है. इनके साथ–साथ चुंबकीय फीते (मैग्नेटिक टेप) और चुंबकीय तवे (मैग्नेटिक डिस्क) और अर्धचालक स्मृति (सेमीकंडक्टर मेमोरी) का भी प्रयोग किया जाता है. संसाधित्र या कंप्यूटर की मदद से नियंत्रक गणनाएं करता जाता है और प्राप्त परिणामों के आधार पर पथ, वेग व स्थिति को नियंत्रित करता है.

शक्ति – आपूर्ति :

बिजली से चलने वाले यंत्रमानवों में शक्ति आपूर्ति का कार्य यह होता है कि वह मिलने वाली विद्युत का नियमन करे. गैस चालित यंत्र–मानव को गैस किसी संपीडक (कंप्रेसर) द्वारा दी जाती है. द्रव चालित यंत्रमानव प्रायः पेट्रोलियम आधारित तेलों का उपयोग करते हैं. प्रणाली में द्रव पंप, निस्पंदक (फिल्टर), टंकी और ताप-विनिमयक (हीट एक्सचेंजर) का समावेश होता

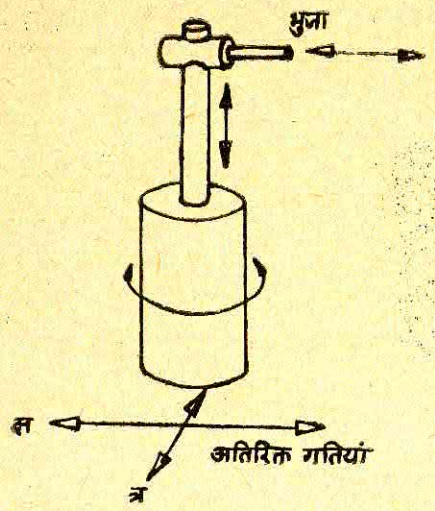

चित्र 1. बेलनाकार-निर्देशांक यंत्रमानव

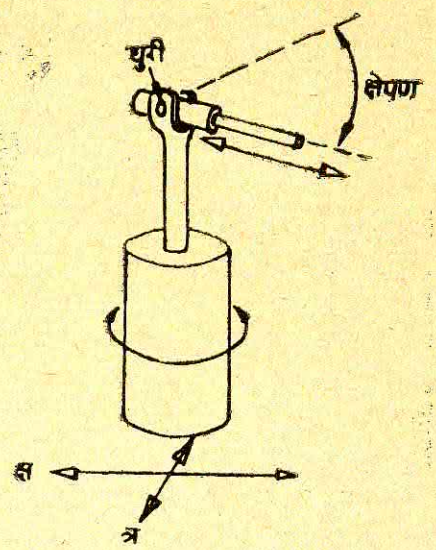

चित्र 2. गोलाकार निर्देशांक यंत्रमानव

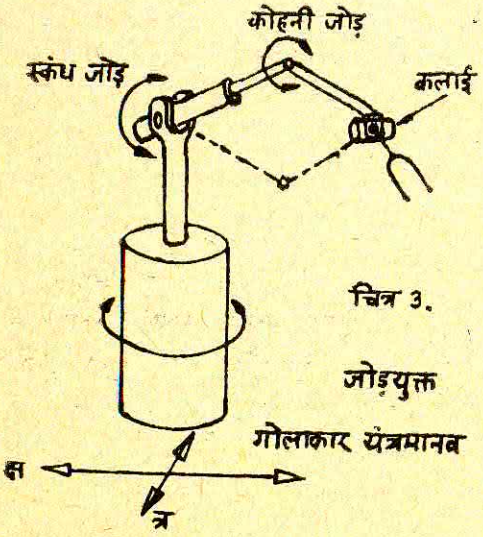

चित्र 3. जोड़युक्त गोलाकार यंत्रमानव

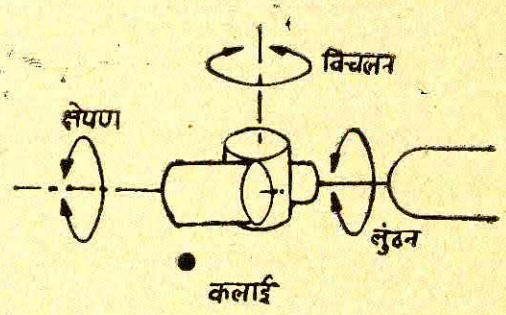

चित्र 4. सचलता के अक्ष

है. द्रव पंप चलाने के लिए मोटर होती है, इस प्रकार विद्युत आपूर्ति भी आवश्यक होती है.

यंत्रमानव के रूपाकार :

कर्मक की यांत्रिक व्यवस्था की दृष्टि से सामान्यत: प्रयुक्त यंत्रमानव रूपाकारों (कन्फिगरेशंस) को तीन भागों में बांटा जा सकता है.

- **बेलनाकार (सिलिंडरीकल),**
- **गोलाकार (स्फेरिकल),**
- **जोड़युक्त गोलाकार (जॉइंटेड स्फेरिकल).**

इस विभाजन का आधार निर्देशांक प्रणाली (कोऑर्डिनेट सिस्टम) है.

बेलनाकार निर्देशांक यंत्रमानवों में ऊर्ध्वाधर स्तंभ पर एक क्षैतिज भुजा होती है. स्वयं स्तंभ घूमनेवाले आधार पर होता है. क्षैतिज भुजा ऊपर नीचे व अंदर–बाहर आ–जा सकती है. इस प्रकार आवरण (एन्वलप), कार्यक्षेत्र या 'पहुंच' एक बेलन का भाग होती है (चित्र–1).

गोलाकार – निर्देशांक यंत्रमानवों में एक भुजा अंदर–बाहर जाती है व साथ ही साथ ऊर्ध्वाधर तल में एक धुरी के चारों ओर घूम सकती है. इसका आधार क्षैतिज तल में घूम सकता है. आवरण गोले का एक भाग होता है (चित्र–2).

जोड़युक्त गोलाकार यंत्रमानवों में भुजा को दो हिस्सों में तोड़कर दोनों के बीच एक कोहनी जोड़ (एल्बो जॉइंट) दे दिया जाता है. शेष उपर्युक्तवत् ही रहता है. आवरण गोले का लगभग एक भाग होता है (चित्र–3).

स्वतंत्रता की श्रेणियाँ (डिग्रीज ऑफ फरीडम) या **सचलता के अक्ष** (ऐक्सॅज ऑफ मूवमेंट) :

यंत्रमानव की भुजा के सिरे पर स्थित इकाई को कलाई (रिस्ट) कहते हैं. कलाई पर स्वातंत्रता की तीन श्रेणियां दी जा सकती है (चित्र–4) :

- **लुंठन (रोल) : भुजा के सिरे के लंबवत् अक्ष पर घूमना,**
- **क्षेपण (पिच) : भुजा से होकर गुजरते ऊर्ध्वा पर तल में घूमना व**
- **विचलन (याँ) : भुजा से होकर गुजरते क्षैतिज तल में घूमना.**

यंत्रमानव को किसी मेज पर क्ष–त्र दो अक्षों में चलाकर (चित्र 1, 2 व 3) या किसी पटरी पर चलाकर (भले ही पटरी फर्श पर या शिरोपरि–ओवरहेड–हो) अतिरिक्त सचलता भी प्रदान की जा सकती है.

कलाई के छोर पर औजार होता है या पकड़ (ग्रिपर) होती है, जिससे यंत्रमानव वांछित कार्य का निष्पादन करता है. अलग–अलग कामों के लिए अलग–अलग औजार या पकड़ें होती हैं. कलाई की सचलता आवरण (एन्वलप) के आकार में वैसे कोई विशेष योगदान नहीं देती है, पर औजार या पकड़ को सही दिशा में देने इसका बहुत बड़ा महत्व है.

वर्गीकरण :

यंत्रमानव को सामान्यत: दो वर्गों में बांटा जा सकता है :

- **अनियमन (नान–सर्वो) यंत्रमानव व**
- **सनियमन (सर्वो–कंट्रोल्ड) यंत्रमानव.**

अनियमन यंत्रमानव :

इन्हें 'उठाओ–और–रखो' या 'अंतिम–बिंदु' यंत्रमानव भी कहा जा सकता है. इनमें स्वतंत्रता की श्रेणियां कम होती हैं, क्रम–क्षमतासी मित होती है व कार्यक्रमण क्षमता भी लचीली नहीं होती. हर अक्ष पर जहां–जहां गति को रोकना है, वहां वहां विराम–बिंदु स्थापित करके इन यंत्रमानवों का कार्यक्रमण (प्रोग्रामिंग) किया जाता है. ये अपेक्षाकृत द्रुतगति, सस्ते, कार्यक्रमण में, चलाने में व अनुरक्षण (मेंटेनेंस) में आसान और विश्वसनीय होते हैं. इनका प्रयोग भार को लादने, उतारने या एक जगह से दूसरी जगह ले जाने में किया जाता है.

सनियमन यंत्रमानव :

इसमें बजाय इसके कि कर्मक के अंग अंतिम बिंदु से ही चलना चालू करें और दूसरे अंतिम बिंदु पर ही रुकें, उन्हें कहीं भी बीच से चलाया जा

सकता है और कहीं भी बीच में रोका जा सकता है. विभिन्न अक्षों का वेग, त्वरण और मंदन नियंत्रित किया जा सकता है. स्मृतिक्षमता इतनी बड़ी होती है कि एक से अधिक कार्यक्रम संगृहीत किये जा सकते हैं. संगणक के उपयोग के कारण यंत्रमानव में 'निर्णय लेने' की क्षमता भी होती है.

सनियमन यंत्रमानवों को भी पुनः दो वर्गों में रखा जा सकता है.

- **बिंदु से बिंदु तक यंत्रमानव व**
- **सतत पथ यंत्रमानव.**

इन्हें हम क्रमशः मध्यम–प्रौद्योगिकी व उच्च–प्रौद्योगिकी यंत्र भी कह सकते हैं.

बिंदु से बिंदु तक यंत्रमानव को भुजा की अंतिम स्थिति के लिए कार्यक्रमित किया जाता है बिना इस बात का ख्याल रखे कि वे एक बिंदु से दूसरे के बीच किस प्रकार से जाते हैं. ये प्रायः बड़े आकार के व भारवाही यंत्रमानव होते हैं.

इनकी तुलना में **सतत पथ यंत्रमानव** छोटे व हल्के होते हैं. इनकी भारवाही क्षमता भी प्रायः दस किलोग्राम से अधिक नहीं होती. इनका उपयोग छिड़काव द्वारा रोगन करने, छिड़काव करने, संधान (वेल्डिंग) करने व घिसाई (ग्राइंडिंग) आदि कामों के लिए होता है.

अब सैद्धांतिक अवलोकन से हटकर आइए देखें कि यंत्रमानवों का प्रयोग कहां–कहां किया जा रहा है?

यंत्रमानवों का व्यावहारिक प्रयोग :

यंत्रमानवों का प्रयोग धीरे–धीरे कई आयाम ग्रहण करता जा रहा है. घरों, विद्यालयों, मनोरंजन सदनों (क्लबों), दुकानों, होटलों और कारखानों में विशेष रूप से जापान व अमरीका में यंत्रमानवों का उपयोग बढ़ता जा रहा है. उन्हें कृत्रिम मेधा संपन्न बनाने के लिए लगातार प्रयोग हो रहे हैं. यही नहीं बाहर से भी उन्हें ऐसा रूपदेने का प्रयत्न हो रहा है कि आदमी का भ्रम हो.

घर में दरवाजे पर पड़ा हुआ अखबार वे लाकर आपको दे सकते हैं. ट्रे में खाने का सामान उठाकर आप तक ला सकते हैं, क्लब में वे आपके खेल के साथी बन सकते हैं. दुकान में आपके घुसते ही वे आपके लिए दरवाजा खोल सकते हैं, हंसकर और झुककर आप का अभिवादन कर सकते हैं. होटल में आपके पूछने पर आपको 'आज की विशेषताओं' की सूची सुना सकते हैं.

कारखानों में वे रक्ततप्त लोहपिंडों को गढ़ाई (फॉर्जिंग) कार्य के दौरान अपने 'हाथों' में पकड़कर जैसा चाहे वैसा, घुमा–फिरा सकते हैं, बिंदु या स्फुलिंग संधान (स्पॉट/आर्क वेल्डिंग) कर सकते हैं, छिड़काव विधि से रंग–रोगन कर सकते हैं, भंडारों में सामान को एक–के–ऊपर एक जमा सकते हैं या जमे सामान को उतार सकते हैं. औजार को या पुर्जे को हाथ में पकड़कर छिद्रण (ड्रिलिंग), घिसाई (ग्राइंडिंग) और चमकाई (पॉलिशिंग) का काम कर सकते हैं.

कारखानों में यंत्रमानवों का प्रयोग दिनों-दिन सिर्फ इसलिए नहीं बढ़ रहा है कि उन्होंने आदमी को नीरस कामों से मुक्त कर दिया है. यह बात अवश्य है कि सुरक्षा की दृष्टि से आपदा भरे कामों में यंत्रमानवों का उपयोग बहुत बढ़ा है, पर उनके बढ़ते उपयोग के पीछे सबसे प्रमुख कारण यह है कि यंत्रमानवों के इस्तेमाल से श्रम की लागत में आश्चर्यजनक गिरावट आयी है और उत्पादकता बहुत बढ़ी है. यंत्रमानवों के प्रचुर उपयोग से जापान जैसा छोटा द्वीप भी ऊंची उत्पादकता और मानक गुणवत्ता के बूते पर अपने उत्पाद बेचने में सुविकसित देशों की टक्कर में खड़ा है.

यंत्रमानवों के उपयोग के पक्ष में एक मनोरंजक तथ्य यह भी है कि यंत्रमानव न तो मजदूर–संघ बनाते हैं, न अधिक वेतन या सुविधा के लिए नारे लगाते हैं, न छुट्टी जाते हैं, न काम पर देर से आते हैं, न थकते हैं, न सोते हैं. हां, कभी–कभी 'बीमार' जरूर पड़ जाते हैं. आंकड़े बताते हैं कि सौ दिन पीछे अधिक से अधिक दो दिन के लिए, पर तब उनका 'इंजीनियर–चिकित्सक' फिर उन्हें खड़ा कर देता है. भविष्य में, क्या पता, यंत्रमानव को चंगा करने का काम भी यंत्रचिकित्सक ही करने लगें!

लेख प्रतियोगिता (1985) में द्वितीय पुरस्कार प्राप्त

रासायनिक प्रयोगशाला में सुरक्षा

डॉ. देवकी नंदन
रासायनिकी प्रभाग, भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, बंबई 400085

रासायनिक प्रयोगशाला में कार्य कर रहे प्रत्येक वैज्ञानिक का सुरक्षा के हर पहलू से अवगत होना अति आवश्यक है. प्रस्तुत लेख में डॉ. देवकीनंदन ने प्रयोगशाला में सुरक्षा के लिए प्रयुक्त आवश्यक सावधानियों का बड़े ही रोचक ढंग से वर्णन किया है. –सं.

प्रथम विश्वयुद्ध चल रहा था. 22 अप्रैल 1915 के दिन बेल्जियम में यप्रेस नगर के बाहरी इलाके में फ्रांस और जर्मनी की फौजें कुछ किलोमीटर की दूरी पर एक दूसरे पर आक्रमण को तैनात थीं. लेकिन फिर अचानक ही कुछ अप्रत्याशित सा घट गया और देखते–देखते फ्रांस के 5000 जवान कुछ ही घंटों में खेत रहे. ऐसा कौन सा कहर ढह गया था? प्रश्न शायद अनोखा हो मगर उत्तर सरल है. जर्मनी ने एक नया वैज्ञानिक प्रयोग किया था. करीब पांच मील लंबे मोर्चे पर जर्मन फौजों ने कुल 180 टन क्लोरीन गैस के 5730 सिलिंडरों का मुंह फ्रांसीसी फौजों की दिशा में खोल दिया था. इसमें संदेह नहीं कि मौसम और हवा की दिशा का उन्हें विशेष ध्यान था. फ्रांसीसी सेना में इस गैस ने खलबली मचा दी लेकिन जर्मनी का दुर्भाग्य कि उन्हें समय रहते अपने प्रयोग की सफलता का पता नहीं चल पाया वरना वे इसका लाभ उठाते. बाद में जब उन्हें पता चला तब फ्रांस ने मोर्चे पर नये जिंदा जवान खड़े कर दिये थे. ऐसी मान्यता है कि आधुनिक रासायनिक युद्ध की शुरुआत इसी प्रयोग से हुई. आपको शायद पता हो कि अब तो 'मस्टर्ड' गैसों और 'नर्व' गैसों का जमाना है जो कि क्लोरीन के मुकाबले बहुत सक्षम हैं. सल्फर और नाइट्रोजन के मस्टर्ड फफोले पैदा करने वाले होते हैं और कुछ ही घंटों में यम–द्वार पहुंचा देते हैं. जब कि नर्व गैसें (आर्गेनो फॉस्फेट) यह काम मिनटों में कर सकती हैं क्योंकि वे हमारे रक्त व नर्व ऊतकों में मौजूद एंजाइम कोलीनएस्टरेस को निष्क्रिय कर देती हैं. पर्याप्त सांद्रता में ये गैसें अपना काम बखूबी निभाती हैं. युद्धों की भीषणता में न जाने कितने जाने और कितने अनजाने रसायन अपनी सशक्त भूमिका निभाते रहे हैं और नित नये रसायनों की खोज जारी है. इनमें हिटलर की 'हाइड्रोजन सायनाइड' गैस और वियतनाम में अमरीका द्वारा प्रयुक्त '2, 4, 5 ट्राइक्लोरो फिनाक्सी एरोटिक एसिड' जैसे वृक्षरोधी रसायन शामिल हैं. इनमें टी. एन. टी., आर. डी. एक्स जैसे विस्फोटक; थर्माइट, और हाइड्रोकार्बन (गैसोलीन) जेली (नापाम बम) जैसे

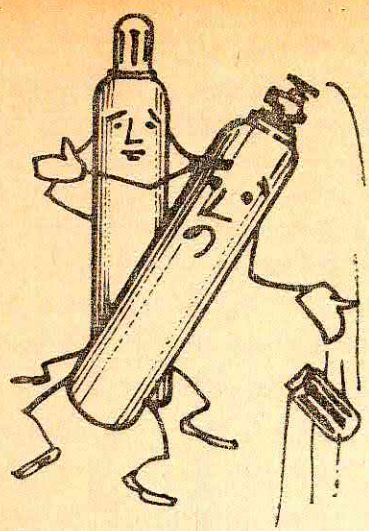

'हमें उठाने-रखने में सावधानी बरतें.'

लनशील रसायन; पीले फॉस्फोरस और पेट्रोलियम
ों जैसे रसायन जो कि धुएं का गुबार बनाते हैं,
भी शामिल हैं. मजे की बात तो यह है कि इन
ायनों की काट भी वैज्ञानिकों के पास मौजूद है.
आप एट्रोपीन का कैप्सूल या इंजेक्शन ले लें
नर्व गैस आप का क्या बिगाड़ लेगी?

इतनी लंबी भूमिका के पीछे उद्देश्य यह था कि
यह महसूस कर सकें कि रसायनों में बड़ी
त है और वे निर्माण और विध्वंस दोनों का काम
ी कर सकते हैं. विखंडन के खोजकर्ता ऑटो
को भी युद्धक गैसों पर काम करना पड़ा मगर
द्वितीय विश्वयुद्ध के समय हुआ जब कि वे
ोयता के भावनात्मक पहलू से सराबोर थे.
हाल आज रसायनज्ञों को कम से कम 20
(प्राकृतिक व संश्लेषित) रसायनों की जानकारी
ो कि हमारी विविध प्रयोगशालाओं की शेल्फों
मौजूद हैं. चाहे रिएक्टर भवन में वह प्रयोगशाला
प्रतिरक्षा अनुसंधान केंद्र में या किसी अस्पताल
क और महत्व की बात यह है कि प्रतिवर्ष
0–2000 नये रसायन खोजे जा रहे हैं. इस
प्रकार रसायन परिवार उल्टे तिकोन को तोड़ता आगे बढ़ता ही जा रहा है.

प्रयोगशाला में सुरक्षा एक नियम :

रासायनिक प्रयोगशालाएं किसी भी देश की रीढ़ मानी जा सकती हैं क्योंकि ये विविध उद्योगों के लिए आधार का काम करती हैं. भारतीय प्रयोगशालाओं में आज करीब 1,00,000 रसायनज्ञ अपने-अपने कामों में जुटे हैं और देश की बढ़ती आबादी और जरूरतों की चुनौतियों से जूझ रहे हैं. अब आप इतना तो मानेंगे कि एक अच्छा रसायनज्ञ बन पाने में बहुत श्रम, समय और पैसा लगता है और प्रयोगशाला के रसायन व यंत्र भी काफी महंगे हैं क्या यह आवश्यक नहीं कि विज्ञान संबंधी कार्य इस प्रकार से किया जाये कि वैज्ञानिकों, रसायनों व यंत्रों का समुचित उपयोग कर अधिकाधिक लाभ उठाया जा सके? यह तभी हो सकता है जब कि प्रयोगशालाओं में अवांछित दुर्घटनाएं न हों और इस तरह जान और माल का नुकसान न हो पाये. इस तरह प्रयोगशाला में सुरक्षा विधि का उपयोग एक जरूरत ही नहीं बल्कि एक नियम बन जाता है जिसका पालन करने की जिम्मेदारी छोटे व बड़े हर अनुसंधानकर्ता की है.

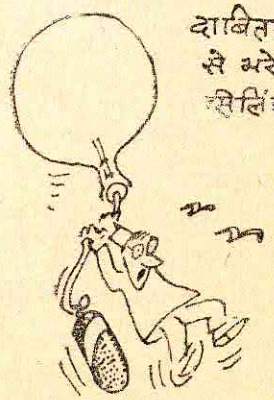

एक अनचाही यात्रा!

प्रयोगशाला में क्या-क्या सामान मौजूद रहता है, उसकी पूरी जानकारी कार्यकर्ता को होनी चाहिए. उनके प्रति, उनके उपयोग में क्या-क्या सावधानियां बरतनी हैं, यह भी उसे मालूम करना होगा. अब क्योंकि प्रयोगशालाएं कई प्रकार की होती हैं यथा भौतिक रसायन, कार्बनिक रसायन, भूगर्भ रसायन, आइसोटोप रसायन, रेडियो रसायन, रिएक्टर रसायन, अंतरिक्ष रसायन, जैव रसायन आदि प्रयोगशालाएं. अत: प्रस्तुत लेख में इन प्रयोगशालाओं में सामान्य रूप में मौजूद साजोसामान की सूची देना तो असंभव ही है. अत: अच्छा तो यही होगा कि विकिरण, पैथोजन आदि से जुड़ी रासायनिकी को हम अलग ही रख दें और एक सरल सी प्रयोगशाला का स्वरूप ही अपने सामने रखें. बस यूं ही समझ लीजिए कि एक प्रयोगशाला है जिसमें कांच के पात्रों में रासायनिक अभिक्रियाएं संपन्न की जाती हैं. गैसों से भरे कुछेक सिलिंडर रखे हैं. एक निर्वात लाइन है, कुछ दोवार फ्लास्क, डेसीकेटर वगैरह हैं और द्रव नाइट्रोजन, द्रव आक्सीजन आदि के पात्र भी रखे हैं. शेल्फों में रसायनों की बोतलें मौजूद हैं. कुछ हीटर, बर्नर भी रखे हैं. बिजली की लाइन से हट कर एक अदद सिंक भी है. एक अलमारी है जिसमें कुछ रसायन बोतलें व अन्य सामान रखा है और दूसरे कोने में एक फ्यूम हुड भी है. साथ ही प्रयोगशाला में एक दो वैश्लेषिक या अन्य मापन यंत्र हैं यथा अवरक्त स्पेक्ट्रोमीटर आदि. यह भी मान कर चलना होगा कि प्रयोग हेतु दस्ताने, एप्रन तथा चश्मे आदि सुरक्षा सामान भी मौजूद हैं. वरिष्ठ वैज्ञानिक बीच बीच में अपने कक्ष से प्रयोगशाला में आकर देख जाता है कि काम किस प्रकार चल रहा है.

अब ऐसी प्रयोगशाला में क्या-क्या खतरनाक चीजें या स्थितियां हो सकती हैं. जिनसे हमें सावधान रहना है. स्थिति तो वैसे सामान्य और सीधी सी लग रही है परंतु यदि गंभीरता से देखा जाये तो निम्नलिखित संकट प्रयोगशाला में मौजूद हैं :

1. सामान्य आचरण के उल्लंघन से पैदा संकट
2. कांच पात्रों के टूटने से पैदा संकट,
3. रसायनों के दुष्परिणामों के संकट,
4. उच्च व निम्न ताप एवं दाब के संकट
5. रासायनिक अपशिष्ट पदार्थों के जमाव के संकट, व
6. अन्यान्य (बिजली आदि) संकट.

कुछ मूलभूत प्रश्न :

इससे पूर्व कि हम इन संकटों का खुलासा करें कुछ मूलभूत प्रश्नों का उत्तर दें. पहला प्रश्न तो यह होगा कि 'संकट' शब्द का प्रयोगशाला के संदर्भ में अर्थ क्या है? दूसरा प्रश्न यह है कि प्रयोगशाला में हानि पहुंचाने वाली चीजों को हानिरहित चीजों से अलग किस प्रकार पहचानें? तीसरा प्रश्न यह है कि प्रयोगशाला में सभी सावधानियों के बरतने पर भी दुर्घटनाएं होंगी या कि नहीं होंगी यानी किसी भी कार्य को शतप्रतिशत सुरक्षा के साथ संपन्न किया जा सकता है कि नहीं ?

सुरक्षा संबंधी विज्ञान जिसे 'औद्योगिक स्वच्छता एवं सुरक्षा' नाम दिया गया है, के अनुसार संकट की परिभाषा है— 'खतरे अथवा दुर्योग की वह स्थिति जिसमें प्रयोगशाला या निकट में ही काम कर रहे व्यक्तियों या वहां मौजूद सामान व यंत्रों को किसी भी प्रकार की हानि पहुंचने का संभावना हो'. औद्योगिक क्रांति के बाद के वर्षों में मनुष्य

ने अपने अधिकारों के लिए जो संघर्ष किया और मार्क्स आदि दार्शनिकों ने जो राह दिखाई, उन्हीं की बदौलत 'संकट' शब्द की यह परिभाषा उभर कर आयी है. सुरक्षा हर व्यक्ति का निजी अधिकार हो गया है चाहे वह प्रयोगशाला में काम कर रहा हो अथवा फैक्ट्री में या कहीं भी. प्रयोगशालाओं के निर्माण में जो आवश्यक सावधानियां बरतनी चाहिए, वे तो ली जाती हैं अतः अब जो बाकी कार्य विज्ञानियों को करना है, उसकी सावधानियां उन्हें खुद ही बरतनी हैं.

दूसरे प्रश्न का उत्तर यह है कि प्रयोगशाला में कोई भी वस्तु हानिरहित नहीं है, किसी न किसी स्थिति में वह खतरनाक है ही. अब सामान्य पानी को ही लीजिए. लगता तो यह पदार्थ हानिरहित ही है लेकिन प्रयोगशाला में प्रयुक्त गरम पानी या भाप से कोई जल भी सकता है. यदि पानी सोडियम, पोटेशियम आदि धातुओं के संपर्क में अनजाने में आ गया तो आग लग जाना कोई बड़ी बात नहीं होगी. इसी प्रकार हाइड्राइडों के संपर्क से जल ज्वलनशील हाइड्रोजन पैदा करता है जो कि आग पकड़ लेती है.

तीसरे प्रश्न का उत्तर तो कुछ इस प्रकार है कि 'काजल की कोठरी में कैसो हू सयानो जाये, एक लीक काजल की लागिहें पै लागिहें'. तो सक्रिय प्रयोगशाला में कोई दुर्घटना न हो, यह न सैद्धांतिक रूप से सही है और न ही व्यवहारिक रूप से. ठीक उसी प्रकार जैसे परम शून्य तापक्रम पैदा करना संभव नहीं, शतप्रतिशत सुरक्षा भी संभव नहीं. लेकिन सावधानी और सुलझे दिमाग से काम करने पर दुर्घटना की संभाव्यता नगण्य सी रह जाती है.

प्रयोगशाला में दुर्घटनाओं के पीछे जो कारण होते हैं, वे इस प्रकार हैं: 1) रसायनज्ञों को कालेजों / विश्वविद्यालयों की शिक्षा में इस पहलू से ठीक अवगत नहीं कराया जाता ; 2) उत्पादक कंपनियां रसायनों आदि के खतरों का पूरा ब्यौरा

प्रयोगशाला में हमारा सामान्य आचरण कैसा हो ?

1) प्रयोगशाला में भागें–दौड़ें नहीं. कॉरीडॉर में भी भी अधिक तेज न चलें क्योंकि कोई वैज्ञानिक पास के कमरे से डेसीकेटर आदि लेकर निकल रहा हो, तो आपकी उससे टक्कर हो सकती है.

2) काम की बेंच पर से अवांछित पात्रों को हटा दें और उन्हें ठीक स्थान में रखें.

3) प्रयोगशाला में सिलिंडरों को खड़ा रखें और वे गिरे नहीं, ऐसा प्रबंध करें.

4) यदि आसवन या अन्य कोई कार्य रात भर के लिए चलता छोड़ रहे हों तो सुरक्षा अधिकारी को अवश्य सूचित कर दें.

5) ठोस कार्बन डाइआक्साइड या द्रव नाइट्रोजन को केवल सामान वाली लिफ्ट से ही लायें, ले जायें.

6) प्रयोगशाला में भोजन व धूम्रपान करना अनुचित है.

7) बोतलों आदि के लेबल गिरने, नष्ट न होने दें. नये लेबल चिपका कर पूरी जानकारी लिख दें. बोतलों पर लिखी चेतावनियों को न भूलें.

8) हर रसायन को सिंक में न फेंकें. सांद्र अम्ल या क्षार को पानी में डाल कर 2M के नीचे ले आयें फिर सिंक में प्रवाहित करें.

9) फर्श पर पानी या तेल गिरा हो तो सफाई करवाने में जल्दी करें.

10) प्रयोगशाला में आवश्यकतानुसार अग्निशामक का प्रबंध जरूरी है.

11) प्रथम उपचार का सामान प्रयोगशाला में होना चाहिए. आंख धोने की फुहार बोतल भी प्रयोगशाला में मौजूद हो.

12) बिजली के काम रसायनज्ञ न करें. उन्हें बिजली मैकेनिक से ही करवायें.

बोतलों पर चिपके लेबलों पर नहीं लिखतीं; 3) सभी वरिष्ठ वैज्ञानिक अपने तहत काम करने वालों को रसायनों, अभिक्रियाओं आदि में निहित संकटों से सावधान नहीं करते; 4) कभी-कभी कार्यकर्ता असावधानी बरतता है, यद्यपि उसे संकटों का ज्ञान होता है; 5) ऐसे कई रसायन प्रयोगशालाओं तक पहुंच जाते हैं जिनके हानिकारक पहलुओं पर विस्तृत शोध नहीं हो पाया; 6) सारी सावधानियों के बावजूद कुछ अप्रत्याशित घट जाता है. इस प्रकार हमने देखा कि कई एक कारण हैं जिनसे दुर्घटना हो जाने की संभाव्यता (दुर्योग) बनी ही रहती है.

इक प्रयोगशाला संकट जुदा जुदा :

प्रयोगशाला में हम सहज विज्ञानी हैं और विज्ञानी का आचरण ही हमें शोभा देता है. मिसाल के तौर पर यदि किसी रसायन की बोतल का लेबल गिर गया या नष्ट हो गया है तो क्या हम उसमें पदार्थ को चख कर मालूम कर लेंगे या फिर अंदाज से निर्णय लेकर बोतल पर नया लेबल चिपका देंगे. यह सर्वथा नीति विरुद्ध न होगा ? चखना तो दूर, उसे सूंघना भी कभी-कभी खतरनाक सिद्ध हो सकता है. समस्या का हल यही है कि उस पदार्थ का विश्लेषण करें या कुछ अन्य भौतिक मापन करें यथा गलनांक/क्वथनांक आदि. बिना हाथ धोये, भोजन के लिए न जायें, प्रयोगशाला में धूम्रपान न करें आदि कई सावधानियां हमें अपने आचरण के संबंध में बरतनी चाहिए. याद रखिए कि हमारा आचरण प्रयोगशाला की रीढ़ है और बेवकूफी हरकतों से हम और हमारे साथी खतरें में पड़ सकते हैं.

अब कांच के विविध प्रकार के पात्रों की बात करें. कांच का शरीर पारदर्शी और निर्मल भले ही हो मगर उस का दिल निश्चय ही काला है, यह बात प्रयोगशालाओं के दुर्घटना आंकड़ों से पता लग जाती है. वास्तव में कांच के टूटने की घटनाएं प्रयोगशाला में सबसे अधिक होती हैं. यद्यपि इनमें कुछ ही ऐसी भीषण होती हैं कि व्यक्ति को लंबी छुट्टी पर भेज दें. ध्यान में रखने योग्य बात है कि कांच के संकट अक्सर कई अन्य संकट भी पैदा कर देते हैं यथा किसी डेसीकेटर में संपन्न की जा रही प्रक्रिया में व्यवधान से (कांच टूटने पर) रासायनिक व दाब के संकट भी खड़े हो जाते हैं. इसीलिए कांच की दुर्घटनाओं के संकटों को 'आधारभूत संकटों' की संज्ञा दी गयी है. कांच पात्रों के संबंध में कुछ आव-

कांच से संबंधित कुछ सावधानियां

1) कांच की नली पर रबर नलिका चढ़ाते हुए तनिक सा पानी या ग्लिसरीन लगा दें.

2) ग्लास ब्लोअर को, पात्र बनाने का सामान, रासायनिक तौर पर साफ कर के दें. इनमें कार्बनिक द्रव्य होने पर ब्लोअर घायल हो सकता है.

3) दीवार फ्लास्क तथा डेसीकेटर पर टेप चिपका लें ताकि विस्फोट की स्थिति में उनके टुकड़े छिटक कर कार्यकर्ताओं को घायल न कर दें.

4) कांच के पात्र में गैस का दाब सीमा के बाहर न जाने दें.

5) मुंह से पिपेटिंग न करें. पिपेट फिलर का प्रयोग करें.

6) सिंक में टूटा कांच न छोड़ें.

7) द्रव से भरी बोतलों का 5 प्रतिशत स्थान खाली रखें.

8) आसवन फ्लास्कों में रबर के कॉर्क इस्तेमाल न करें.

9) गीले हाथों से कांच के बड़े पात्रों/टुकड़ों को न उठायें.

10) टूटे पात्रों की मरम्मत करा लें और उन्हें ठीक स्थान में रखें.

11) कांच से अंग कट जाने पर मेडिकल सहायता अवश्य लें.

श्यक सावधानियां इसी लेख में अन्यत्र दी गयी हैं. इनके अतिरिक्त कार्यकर्ता को अपनी प्रयोगशाला के स्वरूप को ध्यान में रख कर आवश्यक सावनियां बरतनी होंगी.

रासायनिक प्रयोगशाला रसायनज्ञों और रसायनों का संगमस्थल है. इस संगम में अनेक संकट छिपे हैं. कहा जाता है कि हम्फ्री डेवी (डेवी लैम्प, सोडियम, पोटेशियम के खोजकर्ता) ने जब नाइट्रस आक्साइड (लाफिंग गैस, जो कि एक साइकोकेमिकल (Psychochemical) है) बनायी तो उसे चमड़े की एक थैली में एकत्रित कर लिया और गैस के गुणों का निर्धारण करने के लिए एक मित्र की सहायता से उसे स्वयं पर प्रयोग किया. उनका मित्र यदि उन्हें कुछ सेकंड और यह गैस सूंघने देता तो शायद वे उसका असर बता पाने की स्थिति में ही नहीं रहते. बाद में डेवी ने कहा था 'मैं एक ऐसे संसार में पहुंच गया था जहां कुछ भी भौतिक नहीं, केवल विचार और दर्शन मात्र है'. स्वतंत्र फ्लोरीन प्राप्त करने के चक्कर में नॉक्स (आइरिश), निकलेस (फ्रांस) लेपटे (बेल्जियम) आदि वैज्ञानिकों ने अपनी आहुति, दे दी. गेलूजक तथा थेनार्ड (फ्रांस) और डेवी (इंग्लैंड) घायल हुए. 26 जून 1866 के दिन हेनरी मोइसाँ (फ्रांस) ने पेरिस एकेडेमी ऑफ साइन्स के सामने स्वतंत्र फ्लोरीन बना लेने का दावा किया तब उनकी एक आंख पर पट्टी बंधी थी. रसायनज्ञों और रसायनों का इतिहास जितना उत्तेजनापूर्ण और रोमांचक रहा है, उतना ही दुख और दर्द भी उसमें छिपा रहा है. शायद इसीलिए यह कहावत मशहूर हुई कि 'अनजाने विज्ञान की खोज अनजाने संकटों की खोज भी रही है'. लेकिन सच तो यह है कि रसायनों का 'काला' पहलू हम सभी से छिप-सा गया है और केवल 'सफेद' पहलू ही हम देख पाते रहे हैं.

प्रयोगशाला में रसायनों से जुड़ी दुर्घटनाएं, संख्या में, कांच से जुड़ी दुर्घटनाओं से कम अवश्य हो सकती हैं मगर भीषणता में इनका मुकाबला नहीं. ये अक्सर हमें अस्पताल का रास्ता दिखा देती हैं और हमारी बहुमूल्य छुट्टियों को हजम कर जाने में समर्थ हैं. सच तो यह है कि

रसायनों से जुड़ी कुछ सावधानियां

1) रसायनों के प्रयोग से पूर्व उनका ज्वलनांक, टी. एल. वी., फ्लैश प्वाइंट वगैरह देख लें (पुस्तक ए. इरविंग सैक्स देखें.)
2) ज्वलनशील, दहनशील, टॉक्सिक, विषैले पदार्थों की मात्राओं को प्रयोगशाला में उपयोग के अनुरूप सीमित रखें.
3) बिना कारण के, मजाक के तौर पर पदार्थों को एक दूसरे में न डालें.
4) लेबलहीन अनजाने पदार्थों को इस्तेमाल न करें.
5) रसायन की बोतलों को खोलते समय सावधानी बरतें.
6) सुरक्षा सामान (ग्लोव, एप्रन, चश्मा, हुड वगैरह) का उपयोग करें.
7) जल में अघुलनशील रसायन द्रवों को सिंक में न फेंकें.
8) अल्मारी में रखे रसायनों की जांच करते रहें (बोतलों के ढक्कन टूटे न हों, लेबल मौजूद हों आदि.)
9) शेल्फ पर बोतलों को व्यवस्थित रखें (हाइड्रोक्लोरिक अम्ल और द्रव अमोनिया को पास-पास न रखें.)
10) सिलिंडरों में भरी संक्षारक तथा टॉक्सिक गैसों को यथाशीघ्र इस्तेमाल कर लें.
11) रासायनिक प्रतिक्रियाओं, आसवन आदि कार्यों को देखते रहना वांछनीय है.
12) बर्नर गैस सिलिंडरों की ट्यूबें अच्छी हालत में रहनी चाहिए.
13) प्रयोगशाला कार्य के बारे में कार्यकर्ता तथा वरिष्ठ वैज्ञानिक में अक्सर विचार विमर्श होना चाहिए.

रासायनिक प्रयोगशालाओं में मौतें भी हो चुकी हैं. रसायनों के संकट वाले कई (अव)गुण हैं जैसे कि ज्वलनशीलता, विषैलापन, अत्यधिक रासायनिक सक्रियता, विस्फोट के गुण, बेहोशी या उन्माद पैदा करने के गुण आदि. रसायनों के प्रयोग में फ्यूम हुड का बहुत महत्व है. आप आसवन का काम करें या कि पानी में अम्ल का सरल सा मिश्रण तैयार करें, ये काम फ्यूम हुड में ही होने चाहिए. शीघ्र ही और सामान्य ताप पर वाष्पशील द्रवों की बोतलों को तो फ्यूम हुड में ही रखना चाहिए. रसायनों के संबंध में तीन बातें विशेष महत्व की हैं. पहली तो यह कि ज्वलनशील द्रवों के फ्लैश प्वाइंट क्या हैं यह वह निम्न तापक्रम है जिस पर द्रव की वाष्प की हवा में सांद्रता इतनी हो जाती है कि वह वाष्प क्षीण सी ज्वाला के संपर्क में आग पकड़ लेती है (अल्कोहल, ईथर, एसिटोन, बेंजीन आदि). दूसरी महत्वपूर्ण बात है, रसायन का देहरी सीमा मान (TLV). यह टॉक्सिक रसायनों के संबंध में है जो कि सामान्य ताप पर वायु में पर्याप्त वाष्प सांद्रता देते हैं और इस कारण काम करने वाले की सेहत पर बुरा प्रभाव डालते हैं. टी. एल. वी. वह सीमा है जिसके नीचे कार्यकर्ता अपने 8 घंटे के दैनिक कार्य में सुरक्षित रहता है. टी. एल. वी. से अधिक वाष्प सांद्रता सेहत के लिए खतरनाक है. मिसाल के तौर पर सामान्य तापमान पर पारे की वाष्प सांद्रता टी. एल. वी. से 400 गुना अधिक है. रसायनों के संबंध में तीसरी महत्वपूर्ण बात है उस पदार्थ का ज्वलनांक. पदार्थ को जलाने के लिए ज्वाला आवश्यक नहीं, यदि उसके गिर्द ज्वलनांक से अधिक तापक्रम पैदा कर दिया जाये तो वह स्वयमेव जलने लगेगा. थर्माइट तथा नापाम बमों के पीछे इसी तथ्य का उपयोग है.

ताप और दाब जब सामान्य स्तर से बढ़ते या घटते हैं तो वे भी नये संकटों को जन्म देते हैं. इन संकटों में गैस सिलिंडरों, निर्वात लाइनों, दीवार फ्लास्कों, डेसीकेटरों, द्रव गैसों आदि की भूमिका है. इसी तरह द्रवित धातुओं, गर्म तेल, ओवन, हीटरों आदि से भी सावधानी की कई बातें हैं जिन्हें भूलना नहीं चाहिए. उदाहरण के लिए यदि द्रव ऑक्सीजन के संपर्क में कोई कार्बनिक द्रव्य आ गया तो विस्फोट होगा. जहां द्रव नाइट्रोजन का इस्तेमाल करना हो, तो उसे ही प्रयुक्त करें. तापक्रम की समीपता के कारण उसके चूड़ियां आदि स्थान पर द्रव ऑक्सीजन का प्रयोग न करें. पहन कर द्रव नाइट्रोजन / ऑक्सीजन का प्रयोग न करें. सिलिंडरों के बारे में तो सावधानियों की लंबी फेहरिस्त है. उन्हें घसीटना, उनके वाल्वों को छेड़ना या उन में ग्रीस आदि लगाना मना है जलते सिलिंडर को जलने दें मगर उसके शरीर पर पानी की बौछार करते रहें ताकि वह फटे नहीं.

अंत में, हमें अपशिष्ट पदार्थों के बारे में भी सोचना है जो कि रासायनिक प्रक्रियाओं के फलस्वरूप पैदा हो जाते हैं और हमारे किसी काम के नहीं होते. इन्हें पानी में मिलाकर सिंक में फेंकना, दफनाना, जलाना या जो भी उचित तरीका हो, उसी के द्वारा ठिकाने लगाना चाहिए. इन्हें मिश्रित करके न रखें.

सावधानी : कल्याणकारी एकरसता

प्रस्तुत लेख में रासायनिक प्रयोगशाला में मौजूद संकटों का बहुत ही संक्षिप्त ब्यौरा दिया गया है लेकिन हमें आशा है कि इस लेख से प्रयोगशाला में मौजूद संकटों के बारे में जो जागरूकता आवश्यक है, वह अवश्य पैदा होगी. युवा कार्यकर्ताओं में इस जागरूकता की बहुत जरूरत है क्योंकि वे ही अधिक सक्रिय रहते हैं और दुर्भाग्य से संकटों के बारे में अधिक लापरवाह भी. यह तथ्य 'सीवा गाइगी' द्वारा प्रकाशित एक पुस्तिका से स्पष्ट हो जाता है.

अल्बर्ट श्वाइत्जर ने कहा था कि—"जिस प्रकार हर वृक्ष बार-बार उसी प्रकार के फल

(शेष पृष्ठ 22 पर देखें)

लेख प्रतियोगिता (1985) में प्रोत्साहन प्राप्त

आधुनिक औषधि विज्ञान

आश्रिता सुरेन

मकान नं. 357, जोन–2, रोड–1, बिरसानगर, जमशेदपुर 831004

बाजार में उपलब्ध विभिन्न नामों से बिकने वाली अनेक दवाइयां आधुनिक औषधि विज्ञान की देन हैं. कुछ दवाइयों का प्रचलन इतना बढ़ गया है कि वे बगैर डाक्टर की राय के भी खरीद ली जाती हैं. इसलिए इन दवाइयों के सेवन से होने वाले लाभ व प्रयुक्त सावधानियों से अवगत होना अत्यंत महत्वपूर्ण है. प्रस्तुत लेख में इसी विषय पर रोचक जानकारी दी जा रही है. –सं.

चिकित्सा विज्ञान ने काफी तीव्र गति से उन्नति की है. दिन प्रतिदिन यह अधिकाधिक उन्नति करता ही चला जा रहा है. हाल ही में किसी लेखक ने लिखा है कि इस विज्ञान के पथ पर से अड़चनें इतनी शीघ्रता से दूर होती जाती हैं कि आश्चर्य होता है.

परंतु, इसका यह अभिप्राय नहीं कि जो कुछ इस क्षेत्र में पहले हो चुका हो उसका अब कोई महत्व ही न रहा हो. मौलिक सिद्धांत बदला नहीं करते. मानव शरीर रचना विज्ञान तथा मानव शरीर क्रिया विज्ञान दोनों ही के मौलिक सिद्धांत ज्यों के त्यों हैं.

प्राचीन समय के किसी महात्मा का कथन है कि मनुष्य मरता नहीं बल्कि, अपने आप को मार डालता है. यह कथन बहुत से व्यक्तियों के विषय में सत्य सिद्ध हुआ है. यह तो सत्य है कि एक न एक दिन सभी को मरना है परंतु, फिर भी कम व्यक्ति स्वाभाविक जीवन के अंत तक जीते हैं. प्रत्येक संप्रदाय के ग्रंथों में उन लोगों का वर्णन है जो काफी लंबे समय तक जीते रहे. परंतु सौ या इससे अधिक वर्ष की आयु तक पहुंचने वाले इन सभी व्यक्तियों के विषय में यह मालुम हुआ है कि उन्होंने छोटी आयु से ही अपने स्वास्थ्य की देख–रेख आरंभ कर दी थी. अत: चिकित्सा संबंधी समस्याओं के हल में लोगों की सहायता करना तथा रोगों की चिकित्सा और शरीर की देख–रेख से संबंध रखने वाली नयी–नयी खोजों के अनुसार समय–समय पर इसका संशोधन व परिवर्तन आवश्यक होता रहा है. विख्यात अमरीकी डाक्टर फिलिप एस. नेल्सन, भारत में भी बहुत वर्षों तक इस क्षेत्र में कार्यरत रहे. इन्होंने नयी–नयी वैज्ञानिक बातों तथा चिकित्सा विज्ञान के क्षेत्र में हुए नये–नये विकासों और पहले से माने हुए सिद्धांतों का विद्वत्तापूर्वक विश्लेषण किया है. उन्होंने स्वास्थ्य को ठीक करने वाली व्यवहारिक बातें भी बतायी. इसका लक्ष्य यह है कि व्यक्ति रोगों के लक्षणों एवं सिद्धांतों तथा निदानों की उत्तम जानकारी हासिल करें और आवश्यकता होने पर दवाखानों अस्पतालों को महत्व दें तथा सुयोग्य चिकित्सक से इलाज करायें. उन्होंने प्रतिजैविक औषधियों के अंतर्गत अनेकों

प्रभावशाली औषधियों की जानकारी दी उनके अनुसार

सल्फाडायजीन :

इसका प्रयोग आमवतिक ज्वर के पुन: संक्रमण को रोकने के लिए किया जाता है. यदि इसका कई वर्ष तक प्रयोग किया जाये तो रोग के पुन:उभर आने की सभावना बहुत कम हो जाती है. सर्दी–जुकाम में इसका प्रयोग न हो.

पेनसिलीन :

यह औषधि कई रुपांतरित रूपों में पायी जाती है. खाने के साथ – साथ अम्ल–शिरा तथा अत:पेशी इंजेक्शन भी लगाये जाते हैं. बार–बार होनेवाले अवतरित ज्वर के आक्रमणों को रोकने के लिए प्रतिदिन पेनसिलीन ली जाती है.

ब्रॉड स्पैक्ट्रम ड्रग्स :

प्राय: इसे माइसिन ड्रग्स कहते हैं. ये विषैली कम होती हैं. यह औषधि बाजारों में कई नामों से बिकती है. इनके सेवन से रक्त निर्माण में बाधा पड़ती है. परंतु विशेष रूप से आंत ज्वर या टायफायड में इसका प्रयोग होना चाहिए. समय–समय पर श्वेताणु की संख्या की जांच हो.

प्रतिजैविक मलहम :

इनमें कुछ ऐसी भी औषधि हैं जो खायी नहीं जातीं. इसका नाम बैसिट्रेसिन है. यह मलहम के रूप में मिलती है. यह विशेष रूप से आंखों के साधारण रोगों तथा साधारण चोट आदि पर लगाने के लिए बहुत जरूरी तथा अच्छी दवा है.

आंख में डालनें वाली औषधिया या आंख के मलहम :

साधारणत: इनकी शीशी या ट्यूब पर स्पष्ट शब्दों में 'ओफथैल्मिक' अर्थात् 'आंखों के लिए' लिखा रहता है. आंखों में दवा डालते समय नीचे की पलक को नीचे की ओर खींच लीजिए, और जिसकी आंख में में दवा डालनी हो, उससे कहिए कि ऊपर की ओर देखे. मलहम लगाना हो तो नीचे की पलक को जरा अंदर को लगा दें. दवा आंख की पुतली पर नहीं बल्कि श्वेतपटल पर डालना चाहिए.

आइसोनियाजिड :

यह क्षय रोग की चिकित्सा में काम आने वाली एक अच्छी औषधि है. स्ट्रेप्टोमाइसिन और डाइहाइड स्ट्रेप्टोमाइसिन भी प्रभावशाली औषधियां हैं,परंतु डाक्टर की सलाह पर प्रयोग की जानी चाहिए. सल्फोन नाम औषधियां गंधक मिली औषधियों का एक समूह हैं. इनमें से कुछ का कोढ़ के इलाज में प्रयोग होता है.

प्रतिसीरम :

घोड़े के शरीर में इंजेक्शन द्वारा प्रतिक्षमता बढ़ाकर अधिक मात्रा में कृमि पहुंचाए जाते हैं. पुन: उसके रक्त से सीरम तैयार कर लोगों की चिकित्सा में तथा रोहिणी और धनुस्तंभ के इलाज में काम आने वाले प्रतिसीरम काफी महत्वपूर्ण होते हैं. सांप तथा मकड़ी काटे के इलाज के लिए औषधियां भी इसी प्रकार तैयार की जाती हैं. जिसे एन्टिवेनिम्स कहा जाता है.

जुलाब :

पेट में दर्द या उल्टियां होते समय किसी प्रकार का जुलाब नहीं लेना चाहिए. कैस्टर ऑयल अर्थात अंडी का तेल काफी कड़ा जुलाब होता है. मामूली कब्ज में इसका प्रयोग न हो. रुकी हुई टट्टी की दशा में इसका प्रयोग किया जाये तो यह पच जाता है. यह हानि न देकर अवशोषित हो जाता है. मैग्नेशियम सल्फेट (ऐप्सम साल्ट) भी बहुत कड़ा जुलाब होता है. इसकी छोटी खुराक से टट्टी पतली हो जाती है. अर्थात् बहुत सख्त नहीं होती है.

थाइराइड :

यह औषधि पशुओं की गल ग्रंथि में से निकाली जाती हैं. यह विशेष रूप से स्त्रियों में रजोचक्र को नियमित करने के काम आती है तथा प्राय: इससे पीड़ा दूर होती है.

पिपैरेजिन साइट्रेट :

यह औषधि बाजार में 'ऐंटेपार' के नाम से बिकती है. यह विशेष रूप से पीन–कृमियों को नष्ट करने के लिए काम आती है. पीन कृमियों से पीड़ित व्यक्तियों

के घर के प्रत्येक सदस्यों का भी साथ ही साथ इलाज होना चाहिए.

हेदाजन :

गर्म देशों में हो जाने वाले इओसिनोफीलिया नामक फेफड़े के रोग में इसका प्रयोग बहुत अधिक होता है.

पैरेगोरिक :

दस्त किसी भी कारण क्यों न लगे हुए हों उन्हें बंद करने में यह दवा बड़ी हद तक सहायक होती है. स्वयं रोगहर नहीं होती परंतु रोगी को बहुत आराम देती है.

ऐल्यूमिनियम हाइड्राक्साइड और मैग्नीशियम ट्राइसिलिकेट :

इन पदार्थों का केवल एक ही काम है और वह है पेट के अम्ल को निष्प्रभाव करके पेट की दीवार को आराम पहुंचाना. इसके प्रतिकूल प्रभाव से फोड़ा चिरस्थायी न हो जाये.

बेलाड़ोना टिंचर :

यह दवा पेट को शांत करने और अम्ल स्राव को कम कर देती है.

हिस्टामिनरोधी औषधियां :

खुजली किसी प्रकार की क्यों न हो, इससे दूर हो जाती है. विशेषकर वह खुजली जो कुछ विशेष वस्तुओं के प्रभाव से हो जाती है.

पूतिदोषरोधी औषधियां कीटनाशक औषधियां :

दुर्घटनावश चोट लगे स्थान को साफ करने और फिर अच्छी तरह पानी से धोकर इस औषधि के प्रयोग से विसंक्रमण हो जाता है.

आयोडीन का तेल :

यह पूतिदोषरोधी औषधि में आता है. इसे लगाकर पट्टी बांधने की आवश्यकता नहीं.

सिटेवलन :

यह भी पूतिदोषरोधी औषधि है. इसे किसी प्रकार के घावों में लगाकर पट्टी बांध लेनी चाहिए.

डी. डी. टी. और गैमक्सीन :

ये पाउडर के रूप में हर प्रकार के कीड़ों से हमारी रक्षा करते हैं. परंतु पशुओं तथा मनुष्यों के लिए यह हानिकारक सिद्ध होती है.

इन्सुलिन :

बाजारों में कई प्रकार की इन्सुलिन बिकती है. ग्लोबिन, लेंट और प्रोटमिन जिंक इन्सुलिन. यह चौबीस घंटे तक मधुमेह को नियंत्रण में रख सकती है.

ट्रॉल्बूटामाइड और डायबिनीज :

मधुमेह के जिन रोगियों का वजन अधिक हो वे वजन सामान्य हो जाने के बाद इन्सुलिन को बंद कर इन गोलियों का प्रयोग करें.

ऐड्रिनलिन (ऐपिनेफरीन) :

यह अधिवृक्क ग्रंथि का एक प्रकार का स्राव होता ह. दमे के दौरों से आराम पाने के लिए घोल के रूप में नाक--फुहार के काम आता है.

कॉर्टिजोन :

इसे 'स्ट्रेस हारमोन' कहते हैं. क्योंकि दुर्घटना आदि की दशा में स्थिति का मुकाबला करने के लिए शरीर के लिए शरीर को बल देता है.

अर्गट :

यह एक प्रकार की औषधि है जो प्रसव में काम आती है. रक्तवाहिनियां संकुचित तथा प्रसूता के दूध को ठीक दशा में रखती है.

सोडियम सैलिसिलेट :

ऐस्पिरिन 'ऐसीबिल सैलिसिलिक' अम्ल होता है, सोडियम सैलिसिलेट इस अम्ल का सोडियम साल्ट होता है. मामूली से शरीर दर्द या सिर दर्द में इसका प्रयोग होता है.

नार्मल सैलाइन :

जिनमें नमक उतनी ही मात्रा में हो जितनी मात्रा में शरीर के तरल पदार्थ हों उसे में नार्मल सैलाइन कहते

हैं. यह आराम देने, आंखों को धोने तथा कुल्ला करने के काम आ सकता है.

पोटैशियम आयोडाइड :

दमे की दशा में यह दवा चिपचिपी श्लेष्मा के गाढ़ेपन को कम कर देती है, और प्राय: दमे के दौरों को रोक देती है. हिस्टामिनरोधी किसी औषधि के साथ दी जाये.

सिल्वर नाइट्रेट :

'सिल्वर साल्ट', को आसुत जल में घोला जाता है. 10 प्रतिशत वाला घोल नाक में से रक्त निकलने के स्थान को दागने के लिए और मुंह तथा होंठों के मांस को गला देने वाले वृणों को दागने के काम में आता है. यदि यह घोल त्वचा या कपड़ों पर गिर जाये तो तुरंत थोड़े से नमक के पानी या पानी मिले अमोनिया से धोना चाहिए.

पारे से बनी औषधियां :

इनकी चर्चा यहां केवल यह बताने के लिए की जा रही है कि इनका प्रयोग न किया जाये. कैलोमेल जुलाब के रूप में काम आता है, फिर भी इसका प्रयोग करना ही नहीं चाहिए. यह भयंकर विष है, वस्तुत: इसे घर में रखना नहीं चाहिए.

फीनोबबिटोन अर्थात फीनोबबिटॉल या न्यूमिनल :

इस औषधि से नींद आने लगती है. मिरगी के लिए यह मानी हुई दवा है. लगातार प्रयोग से नींद नहीं बल्कि दौरों पर नियंत्रण रहता है. डिलैनटिन सोडियम मिरगी के लिए उत्तम दवा है.

मानव की वैज्ञानिक चमत्कारिक प्रक्रिया निश्चित रूप से इस तथ्य की ओर संकेत करती है कि, इस अदभुत रचना के पीछे ईश्वरीय शक्ति है— अर्थात मनुष्य का यह धर्म है कि वह ईश्वर के महान नैतिक नियम का पालन कर व्यवहारिक विज्ञान को महत्व देते हुए स्वास्थ्य के नियमों के अनुसार ही जीवन व्यतीत करे.

रासायनिक प्रयोगशाला में सुरक्षा

(पृष्ठ 18 का शेष भाग)

पैदा करता है, इसी प्रकार हममें से अनेक लोगों का जीवन भी एकरसता से ओतप्रोत है. मगर हर वर्ष क्या उस फल का स्वाद अनोखा नहीं होता? क्या वह हमारे अंदर नयी ताजगी और स्फूर्ति नहीं भर देता? इसी लिए अच्छे विचारों को, कर्मों को क्या हम एकरसता के कारण छोड़ दें?" रसायनज्ञ के जीवन में भी एकरसता है. बार-बार वही सावधानियां भी एकरसता पैदा करती हैं. मगर इनमें ही हमारा कल्याण छिपा है.

रिश्ता

* प्रकाश तातेड़

सांप के साथ
विषधर का विशेषण
कुछ इस प्रकार
जुड़ गया है कि
हम विषहीन सांप को भी
देखते ही मार डालते हैं.
भविष्य में कहीं
ऐसा न हो जाये कि
मानव मात्र पर
छल, कपट, बेईमानी
झूठ और अविश्वास का
लेबल चिपक जाये
और तब
चंद्र ईमानदार,
सच्चे सरलमना लोगों पर
संदेह की अंगुलियां उठने लगें.

व्याख्याता, जीव विज्ञान,
रा. उ. मा. वि., आमेट 313332

भारत में अंकगणित का विकास

कुमार नीरज
मेल रोज काटेज, शिमला 171003

विश्व के इतिहास में, संख्याओं को भारत में पहली बार एक वैज्ञानिक पद्धति से लिखा गया, जो अब दशमलव पद्धति कहलाती है. इस पद्धति का प्रसार संसार के अन्य देशों में अरब विजेताओं ने किया. इस लेख में भारत के कुछ महान गणितज्ञों के उल्लेखनीय योगदान पर प्रकाश डाला गया है —सं

गिनती का विकास :

हम अभी तक उस युग से परिचित नहीं हैं, जब मनुष्य ने भाषा का प्रयोग करना सीखा और गिनती गिनना सीखा, लेकिन अंकगणित के इतिहास में गिनती गिनने को सर्वप्रथम कदम माना जाता है और यह अनुमान लगाया जाता है कि मनुष्य ने किसी भी वस्तु को लेकर उनकी संख्याओं को पढ़कर गिनना सीखा, जैसे–एक गन्ने में कितनी पोरियां होती हैं? एक रस्सी में कितनी गांठें लगाई गयी हैं, आदि.

जैसे ही दिन बीतता, एक रस्सी में एक मोती परो दिया जाता. इस प्रकार उसने अपनी आयु के दिनों को गिनना सीखा. इस प्रकार हम कह सकते हैं कि उन वस्तुओं में जिन्हें हम गिनते हैं और उन संख्याओं में जिनसे हम उन वस्तुओं को गिनते हैं, में गहरा संबंध है.

गिनती के विकास में दूसरा कदम संख्याओं को नाम देना था. वस्तुओं का एक गुट या इकट्ठी रखी वस्तुओं की संख्या को एक विशेष नाम देना था. इस सारी क्रिया से यह पता लग जाता था कि उन वस्तुओं की कुल संख्या क्या है? उदाहरण के तौर पर हम एक, दो, तीन......कहते हैं. इसी तरह, संख्याओं को लिखने के लिए संकेतकों का प्रयोग किया जाने लगा.

दस की संख्या को प्रकट करने के लिए किसी एक विशेष प्रकार का चिन्ह प्रयोग में लाते थे जो अंग्रेजी के अक्षर (U) का उल्टा होता था.

इसी प्रकार भिन्न–भिन्न स्थान पर लोगों ने गिनती गिनने का तरीका भी भिन्न भिन्न प्रकार से अपनाया. बेबिलोनिया के निवासी मिस्रियों से भिन्न प्रकार के संकेतक प्रयोग में लाते थे. रोमनों, अरबियों और चीनियों के गिनती गिनने के तरीके भी आपस में मिलते जुलते न थे.

यह ढंग एक से दस तक की संख्याओं को दर्शाने के लिए तो ठीक था परंतु बड़ी–बड़ी संख्याओं के लिए गलत था इसके लिए अत्यधिक संकेतकों को याद करना पड़ता था और साथ ही उनके नाम भी. इस असुविधा को दूर करने के लिए समूहीकरण का एक नया तरीका उपयोग में लाया गया. मिस्रियों ने "दस" में संख्याओं का समूहीकरण किया. जब

वे गिनती गिनते, दस पर पहुंचते तो एक भिन्न संकेतक ∩ उपयोग में लाते थे. दस दसों को अर्थात 100 की संख्या वे ९ लिख कर अपना मतलब स्पष्ट करते थे.

अनेक लोगों ने अपनी गिनती का तरीका 10 ही रखा है. क्योंकि हमारे दस उंगलियों–अंगूठे हैं, लेकिन केवल एक यही रास्ता नहीं है. रोमनों ने संख्याओं का समूहीकरण 5 में भी किया और 10 में भी. उन्होंने पांच के लिए V और दस के लिए X का संकेत प्रयोग किया. वे 10 को X के संकेतक में प्रयोग करने में यह तर्क पेश करते हैं कि X, दो V को मिला कर ही बना है. बैबीलोनिया निवासियों की संख्याओं के समूहीकरण का आधार 60 था यद्यपि जैसे कि हमारी संख्याएं भी 10 पर ही आधारित हैं. परंतु इन संख्याओं से गणना करते हुए रास्ते में 60 सुरक्षित है.

आज भारत में संख्याओं के संकेतक 1, 2, 3, 4,.....9 हैं. भारत की इस अंक पद्धति को हिंदु–अरबी (इंडो–अरेबिक) ढंग भी कहा जा सकता है. मिस्रिओं की तरह भारत में भी संख्याओं का समूहीकरण 10 में किया जाता है, परंतु हमारे 1 से 9 तक के सभी संकेतक भिन्न हैं. एक चिन्ह 0 शून्य को अंकित करने के लिए बनाया गया है.

एक से लेकर नौ तक के अंक एक प्रकार के चित्र हैं जो हमारे मन के विचारों में संख्याओं को प्रकट करते हैं.

जमा— घटाने के चिन्ह :

एक से नौ तक के अंकों को लेकर आज हम लाखों, करोड़ों और यहां तक कि कई शंख तक की भी गणना कर सकते हैं. अंकों के आविष्कार के साथ ही दो संख्याओं को आपस में जोड़ने, गुणा करने और भाग देने की पद्धतियां भी आरंभ हो गयी. इंग्लैंड के गणितज्ञ 'जॉन विदमान' व फरांस के 'फरांकोसिस' ऐसे व्यक्ति थे जिन्होंने घटाने व जमा करने के लिए क्रमशः (–) व (+) के चिन्हों का प्रयोग आरंभ किया. बराबर के चिन्ह (=) का सबसे पहले 1557 में प्रयोग किया गया. ये सब चिन्ह 1558 ई. में ब्रिटेन में छपी एक पुस्तक में इकट्ठे प्रयोग किये गये. यह पुस्तक रॉबर्ट द्वारा लिखी गयी थी. इसके पश्चात ये चिन्ह व संकेत 100 वर्ष बाद तक कभी भी प्रयोग में न आये. आर्टरड नामक एक गणितज्ञ ने 1631 ई. के लगभग गुणा करने के लिए (×) के चिन्ह का प्रयोग करना आरंभ किया.

लगभग 1637 ई. के लगभग "डिसकार्टस" नामक एक फरांसीसी गणितज्ञ ने गुणा करने की पद्धति को इसके चिन्ह को मिटाकर प्रकट किया. जैसे 7.5=35(÷) का संकेत भाग करने के लिए प्रयुक्त किया जाने लगा. इस प्रकार अंकगणित में हम देखते हैं कि चिन्हों का विकास केवल दो तीन शताब्दियों पूर्व ही हुआ है.

वैसे अंकों को जमा करने व घटाने की रीति लोग बहुत पहले से ही जानते थे. परंतु जमा करने व घटाने के लिए चिन्हों का प्रयोग उन्होंने केवल तीन शताब्दियों पूर्व ही जाना.

जर्मनी में क्रिस्टफ रुडोल्फ, अरब में अलबारिज्मी, स्विटजरलैंड में आयलर (1707–1783), फरांस में ई. बेजुरा (1730–1783) और ब्रिटेन में जे. जे. सिलवेस्टर (1814–1893) जैसे बड़े–बड़े गणितज्ञ पैदा हुए जिन्होंने गणित की तीनों शाखाओं अंकगणित, रेखागणित व बीजगणित के लिए ही कार्य नहीं किया बल्कि गणना करने की एक विशेष विधि (कलनशास्त्र) और निर्णायक ज्यामिति की उन्नति के लिए भी अपना विशेष योगदान दिया. परंतु, फिर भी भारत में आर्यभट्ट, महावीर, श्रीपति, भास्कर, श्रीधर, ब्रह्मगुप्त, श्रीनिवास, रामानुजम, व आर्यभट्ट द्वितीय जैसे महान गणितज्ञ के कार्यों को भुलाया नहीं जा सकता.

मिस्र में यूक्लिड, हेरियर, प्लेटो और आर्किमिडीज द्वारा लिखी गयी रेखागणित व भौतिक गणित की पुस्तकें संसार प्रसिद्ध हैं.

गणित की परिभाषा में 'गणना' का बहुत महत्त्व है. जैसे किसी भी वस्तु की किसी भी प्रकार से की

गयी गणना को ही हम गणित कहते हैं. यहां पर गणित "गणना" शब्द से ही बना है.

आर्यभट्ट का जन्म :

हमारे भारत देश में बड़े–बड़े महान गणितज्ञ पैदा हुए हैं. यदि भारत के प्राचीन इतिहास के पन्ने पलटने आरंभ कर दिये जायें तो हमें हर शताब्दी में और हर राजदरबार में एक गणितज्ञ का नाम सुनने को मिलेगा. लगभग डेढ़ हजार वर्ष पूर्व "गुप्त" राजवंशों के समय में ऐसा ही एक महान गणितज्ञ "आर्यभट्ट" था. उसका जन्म पाटलीपुत्र (कुसुमपुर) पटना जिले में हुआ था. उन्हें भारतीय बीजगणित के महान संस्थापक एवं महान गणिताचार्य के नाम से जाना जाता था.

आर्यभट्ट ने अपनी पहली पुस्तक 23 वर्ष की उम्र में लिखी थी. उनकी यह पुस्तक बीजगणित पर लिखी गयी संसार की सबसे पहली पुस्तक थी. इस पुस्तक का नाम "आर्यभट्टीय" था. यह पुस्तक गद्य के रूप में न लिख कर पद्य के रूप में लिखी गयी थी. यह चार पदों में विभक्त है और इसकी शैली अत्यंत वैज्ञानिक व सुरुचिपूर्ण है.

गीतिका पद : आर्यभट्टिय का सर्वप्रथम पद गीतिका पद है. इस पद में लेखक ने बड़ी संख्याओं को संस्कृत वर्णमाला में व्यक्त करने की एक विधि का वर्णन किया है. उनके अनुसार जो समस्त पदों को जानता है वह पूर्ण ब्रह्म को प्राप्त करता है.

गणित पद : यह भाग सांख्यिकी से संबंधित है. इसके अनुसार हर अगला अंक पिछले अंक का दस गुणा होता है.

काल क्रिया पद : आर्यभट्टीय का तीसरा पद "काल क्रिया पद" है. इस तरह एक दिवस को 60 नाड़ी और एक नाड़ी को 60 विनाड़ी में बांटा गया है. यहां पर एक नाड़ी 24 मिनट व एक विनाड़ी 24 सेकेंड के बराबर रखी गयी है.

गोल पद : आर्यभट्टीय के इस अंतिम पद में पृथ्वी के गोल होने व उसके सूर्य के चारों ओर चक्र काटने का विस्तृत जिक्र है. आर्यभट्ट ने इस पुस्तक में खगोलीय ग्रहों व पिंडों के घूमने का भी वर्णन किया है

आर्यभट्ट ने संख्याओं को दर्शाने के लिए देवनागरी संस्कृत के वर्णों का भी सहारा लिया. जैसे क, ख, ग, घ इत्यादि क्रमशः 1, 2, 3, 4 इत्यादि को दर्शाते थे और इस प्रकार "क" से "म" तक के वर्ण 1 से 25 तक की संख्याओं का बोध कराते थे. शेष वर्ण अर्थात य, र, ल, व आदि क्रमशः 30, 40, 50, 60 और इस तरह आगे की संख्याओं को व्यक्त करते थे. इस तरह 100 "ह" द्वारा व्यक्त किया जाता था.

आर्यभट्ट ने संस्कृत के वर्णों द्वारा भी बड़ी–बड़ी संख्याओं को व्यक्त किया. इन संख्याओं के आधार पर उन्होंने एक महायुग में पृथ्वी द्वारा लगाये जाने वाले परिभ्रमणों की संख्या 1,528,237,500 बतायी थी.

आर्यभट्ट ने अपनी पुस्तक में बताया है कि एक महायुग में चार युग होते हैं. सतयुग, त्रेतायुग, द्वापरयुग एवं कलियुग. इनकी अवधियां क्रमशः 1,728,000; 12,96,000; 8,64,000 एवं 4,32,000 वर्ष हैं. अर्थात इनकी अवधियों का अनुपात 4 : 3 : 2 : 1 है. उन्होंने गणना करके यह भी बताया कि कलियुग के 5,080 वर्ष बीत चुके हैं.

इसके अतिरिक्त आर्यभट्ट ने कुछ सामान्य सिद्धांतों का भी प्रतिपादन किया. उन्होंने दो संख्याओं को गुणा करने का एक विशेष ढंग अपनाया. उनका कहना था कि दो संख्याओं का गुणनफल ज्ञात करने के लिए दोनों संख्याओं के वर्गों के योग को दोनों संख्याओं के मिश्रित योग के वर्ग में से घटा कर आधा कर दें.

उदाहरणार्थ मान लिया कि 'क' एवं 'ख' दो संख्याएं हैं, तो आर्यभट्ट के अनुसार —

$$क \times ख = \frac{(क+ख)^2 - (क^2+ख^2)}{2}$$

बीजगणित के अतिरिक्त आर्यभट्ट ने त्रिकोणमिति एवं ज्यामिति के विकास में भी महत्वपूर्ण योगदान दिया उन्होंने "पाई" का मान 3.1416 ज्ञात किया

जो सबसे पहली बार दशमलव के चौथे स्थान तक सही ज्ञात किया गया था.

आर्यभट्ट का बीजगणित ज्ञान कितना विस्तृत था, यह जानने के लिए उसकी तुलना मिस्र के महान बीजगणित बायोफेटस से करने पर पता चलता है कि आर्यभट्ट के पास इतना बीजगणितीय ज्ञान था कि डायोफेंटस भी उससे अनभिज्ञ था.

रेखागणित की एक प्रमेय जिसे आज पाइथागोरस की प्रमेय कहा जाता है आर्यभट्ट ने पहले ही सिद्ध कर दी थी. अतः मिस्र और यूनान के लोगों ने आर्यभट्ट की अनेक रेखागणितीय, बीजगणितीय एवं गणितीय समस्याओं के हल बाद में ढूंढे.

"आर्यभट्टीय" में एक स्थान पर वर्णित है– 'एक समकोण त्रिभुज में आधार पर बना वर्ग एवं लंब पर बना वर्ग का योग कर्ण पर बने वर्ग के योग के बराबर होता है." यही पंक्तियां डेढ़ हजार वर्ष के बाद पाइथागोरस ने भी सिद्ध कीं. कोपर्निक्स, गैलेलियो और न्यूटन आदि युरोपीय विद्वानों ने जो तथ्य सिद्ध किये आर्यभट्ट व वाराहमिहिर हजार वर्ष पूर्व ही उन्हें स्पष्ट कर चुके थे.

यद्यपि 'आर्यभट्टीय' (आर्य सिद्धांत) आर्यभट्ट की केवल एक रचना है. तथापि यह अनेक वैज्ञानिक तथ्यों को अपने में समेटे हुई है.

भास्कराचार्य का योगदान :

"आर्यभट्ट" के बाद भारत के दूसरे गणितज्ञ जिनकी गणना महत्तम गणितज्ञों में लंबी सूची की आरंभिक पंक्तियों में होती है–वे "भास्कराचार्य" हैं. उनका जन्म 1114 ई. में हुआ था. वे उज्जैन की वेधशाला के निदेशक थे. गणित पर उनका सर्वप्रसिद्ध ग्रंथ "लीलावती" था. जिसका नामकरण उन्होंने अपनी पुत्री "लीलावती" के नाम पर किया था. इसमें उन्होंने गणित के तीनों क्षेत्रों–अंकगणित, बीजगणित, व रेखागणित के सिद्धांतों का प्रतिपादन किया है. 'लीलावती' का अंग्रेजी अनुवाद सन 1816 में टेलर ने किया और फारसी में उसका पहला अनुवाद फैजी ने सन् 1587 में किया था. उस समय 'लीलावती' इतना प्रसिद्ध ग्रंथ माना जाने लगा था कि इसकी ख्याति योरप तक फैल गयी थी.

"लीलावती" में भास्कर ने कई अध्यायों का समावेश किया है, जैसे, ब्याज, भिन्न, त्रैराशिक, व्यावसायिक गणित, पूर्णांक, श्रेणियां एवं बीजगणित.

भास्कर की अन्य दो पुस्तकें भी गणित के क्षेत्र में महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं.

1. बीजगणित व
2. सिद्धांत शिरोमणि

ज्योतिष व गणित, 'सिद्धांत शिरोमणि' के भाग हैं.

उक्त पुस्तकों में भास्कर की अद्भूत विद्वत्ता का स्पष्ट प्रमाण है, जिस कारण उनको भास्कराचार्य के नाम से सुशोभित किया जाता है.

भारत प्राचीन समय से ही संख्याओं के विज्ञान में विश्व गुरू रहा है. भारत ने बहुत पहले ही गणित की इतनी बड़ी–बड़ी संख्याओं का आविष्कार कर दिया था कि जिसकी कोई कल्पना मात्र भी नहीं कर सकता. एक छोटे से बालक को ही इकाई, दहाई, सैकड़ा, हजार, दस हजार, लाख, दस लाख, करोड़, दस करोड़, अरब, दस अरब, खरब, दस खरब, नील, दस नील, पदम, दस पदम, शंख, दस शंख, महा शंख, तक गिना दिये जाते हैं.

पश्चिम में आज भी बड़ी संख्याओं को केवल मिलियन $(1000000-10^6)$, बिलियन $(1000000000-10^9)$, ट्रिलियन $(1000000000000-10^{12})$ तक ही गिना जा सकता है. जिस समय रोम में 10^3 से ऊपर की और यूनान में 10^4 से ऊपर की संख्याओं को नाम ही न दिया जा सका था उस समय भारत के जैन मुनियों और बौद्ध दार्शनिको ने 10^{140} तक की संख्याओं का नामकरण कर लिया था.

संख्याओं की खोज, उनके विस्तार व नामकरण के साथ ही गणित का विस्तृत अध्याय आरंभ हो

जाता है वर्गमूल से लेकर नियामक ज्यामिति तक और ऐकिक विधि से लेकर 'कलन शास्त्र' तक गणित के ही क्षेत्र हैं. गणित का यह क्षेत्र जितना विस्तृत है और इसमें समाविष्ट प्रत्येक प्रकरण का उदय कहां से हुआ और कैसे हुआ यह बताना हमारे लिए कठिन ही नहीं अपितु एक असंभव कार्य है फिर भी गणित की कुछ महत्वपूर्ण पद्धतियों का जिनका समस्त जीवन में हम बहुत उपयोग करते है के उदभव और विकास को आपके समक्ष रख रहे हैं.

वर्गमूल :

आर्यभट्ट के अनुसार वर्ग, 'दी हुई संख्या का दी हुई संख्या जितने गुणा ही होता है'. उसने अपनी पुस्तक आर्यभट्टीय में भाग द्वारा वर्गमूल निकालने की पद्धति भी बतायी. बाद में महावीर, श्रीपति एवं भास्कर आदि ने आर्यभट्ट के अनुसार ही, पद्धति बतायी और उस विधि का अधिक विवरण किया.

मिस्रियों ने बहुत समय तक वर्गमूल के लिए प्रतीक □ का प्रयोग भी किया. काफी समय तक वे अंग्रेजी वर्णमाला के अक्षर 'आर' का भी प्रयोग करते रहे.

वर्गमूल चिन्ह का उपयोग सर्वप्रथम गणितज्ञ क्रिस्टल रुडोल्फ ने अपनी "कॉस" नामक पुस्तक में किया. इस मूल चिन्ह को उस समय उनके अपने देश ने भी मान्यता नहीं दी. कुछ इतिहासज्ञों ने इसे अंग्रेजी की छोटी वर्णमाला के वर्ण "आर" का विस्तृत रूप ही समझा. परंतु बाद में बहुत लोगों ने इस चिन्ह को प्रयोग करना आरंभ कर दिया. और 17 वीं शताब्दी के अंत तक क्रिस्टल रुडोल्फ के प्रतीक को मानक प्रतीक के रूप में प्रयोग किया जाने लगा.

प्रतिशत :

नगर की जनसंख्या में वृद्धि, विद्यार्थियों द्वारा प्राप्तांक, सेठ के पास शेष सामान यह सब हम प्रतिशत के माध्यम से और इसी की सहायता से निकाल सकते हैं. प्रतिशत का ज्ञान बहुत पहले से है. प्रतिशत के चिन्ह (%) का प्रयोग संभवत: आज से लगभग 500 वर्ष पूर्व एक अज्ञात पांडुलिपि में किया गया था. आरंभ में यह चिन्ह कुछ अजीब से ढंग से लिखा जाता था. सोलहवीं और सत्तरहवीं शताब्दी में ब्याज व लाभ–हानि के प्रश्नों को हल करने के लिए यह चिन्ह बहुत ही बड़ी मात्रा में प्रयोग किया जाने लगा. अत: व्यावसायिक गणित की जड़ें मजबूत करने में प्रतिशत का भी महत्वपूर्ण योगदान रहा है.

पृथ्वी का परिमाप :

आज के भूगोलवेत्ता पृथ्वी का व्यास 8000 मील मानते हैं. और ब्रह्मपुराण में पृथ्वी का परिमाण पचास कोटि योजन लिखा है ये दोनों सत्य हैं. व रघुनाथ दत्त बंधु ने अपनी पुस्तक "पुराण–कथा कौमुदी में इस बात का स्पष्टीकरण इस तरह किया है कि भूगोलवेत्ताओं ने पृथ्वी का जो माप किया है, यह पृथ्वी की मध्यरेखा अर्थात व्यास का है जो आठ हजार मील है. परंतु ब्रह्मपुराण में समस्त पृथ्वी की भूमि का "माप" घनफल निकालकर बताया है.

किसी गोल पदार्थ का "घनफल" निकालने के लिए शास्त्र में यह युक्ति रखी गयी है कि उस गोल पदार्थ के व्यास को तीन बार गुणा, अर्थात घन फल निकालकर उसका आधा हिस्सा ले लिया जाये

इस तरह हिसाब करने से सिद्ध होता है कि पृथ्वी के व्यास का परिमाण जब आठ हजार मील है, और दो मील में एक कोस और चार कोस का एक योजन होता है तो आठ हजार मील का एक हजार योजन हुआ जो कि पृथ्वी का व्यास है, इसलिए पृथ्वी की समस्त भूमि का परिमाप घनफल के हिसाब से $-(1000 \times 1000 \times 1000)/2 = 50,00,00,000$ अर्थात पचास कोटि योजन हुआ. अत: यह स्पष्ट है कि पृथ्वी का परिमाप ब्रह्मपुराण के रचनाकाल के समय रचयिता को मालूम था. उस समय केवल माप की रीति में भेद था.

आइए, परमाणु के भीतर झांककर देखें

(द्वितीय भाग)

जनार्दन स्वरूप

स्वास्थ्य भौतिकी प्रभाग, भा. प. अ. कें., बंबई–400085

डाल्टन के युग से आज तक की परमाणु की यात्रा बड़ी अद्भुत एवं रोचक रही है. डाल्टन का 'परमाणु' द्रव्य की 'अंतिम' एवं 'सूक्ष्मतम' इकाई था पर आज का परमाणु द्रव्य की मध्यवर्ती स्थिति है. ऐसा लगता है कि 'अंतिम' की गहराई और रहस्यमयता बढ़ती जा रही है तथा जिसे अंतिम समझा गया था वह आदिम था. परमाणु के भीतर विविध कणों का एक संसार बसा हुआ है. प्रत्येक बल का एक वाहक कण होता है. जितने कण हैं उतने प्रकार के बल हैं. स्पष्ट मत यह उभरता है कि कणों के आदि में एक बल है तथा विभिन्न स्थितियों में इस बल की मुद्राओं को ही अनेक नाम वाले कणों की संज्ञा दी गयी है. प्रस्तुत अंश में लेखक ने मौलिक कणों की क्रमिक खोज का विवरण देकर परमाणु की भीतरी दुनिया का रोचक रहस्योद्घाटन किया है. —सं.

नाभिकीय बल और उनके वाहक कण

भौतिकविदों को परमाणु का नाभिक–क्षेत्र बहुत रहस्यमय लगता था. क्योंकि उसके अंदर अनेक प्रोटॉन मजबूती से बंधे हुए कम जगह में रहते हैं. समान आवेश होने के कारण सिद्धांततः कई प्रोटॉन न्यूक्लियस में एक साथ नहीं रह सकते पर वस्तुस्थिति विपरीत होने के कारण यह अनुमान लगाया गया कि नाभिक में नाभिकानों को आकर्षित करने वाला कोई ऐसा 'शक्तिशाली बल' होना चाहिए जिसकी उपस्थिति में प्रोटॉन के बीच विद्युच्चुंबकीय विकर्षण बल निस्तेज हो जाते हों. यह देखा गया कि ये 'शक्तिशाली बल' इलेक्ट्रॉन को प्रभावित नहीं करते हैं (इलेक्ट्रॉन नाभिक में नहीं रहता है). शक्तिशाली बलों का प्रभाव–क्षेत्र भी नाभिक की परिसीमा (लगभग 10^{-12} से. मी.) तक ही सीमित रहता है, अर्थात ये बल लगभग 10^{-12} से. मी. तक ही क्रियाशील रहते हैं. इससे अधिक दूरी पर इनका प्रभाव समाप्त हो जाता है.

शक्तिशाली बलों के सीमित दूरी तक ही प्रभावशाली होने के कारण जापानी वैज्ञानिक युकावा ने सोचा कि प्रकृति में ऐसी सीमा या लक्ष्मण-रेखा का कारण क्या हो सकता है? उन्होंने हाइजेनबर्ग के अनिश्चितता सिद्धांत पर भी गहराई से विचार करना आरंभ कर दिया. उन्होंने देखा कि प्रमात्रा इलेक्ट्रोगतिकी के अनुसार प्रकाशाणु विद्युच्चुंबकीय बलों का वाहक होता है एवं प्रकाशाणु का द्रव्यमान नहीं होता है, अतः वह अनिश्चितता सिद्धांत के अनुसार शून्य ऊर्जा लेकर अनंत समय तक चलता रह कर अनंत दूरी बिना

किसी मर्यादा के तय कर सकता है और, इस प्रकार, विद्युच्चुंबकीय बलों को अनंत दूरी तक पहुंचा सकता है. परंतु, यदि यह मान लिया जाये कि न्यूक्लीय बल के भी वाहक कण होते हैं, और उनका द्रव्यमान भी होता है तो उनकी वाहकता सीमित हो जायेगी.

मान लीजिए कि शक्तिशाली बल के वाहक कण का द्रव्यमान m होता है तो वह अपने द्रव्यमान के समतुल्य ऊर्जा ($\Delta E = mC^2$) के बराबर ऊर्जा अक्षयता के सिद्धांत का निम्नतम उल्लंघन करेगा ही. यह उल्लंघन अधिक से अधिक उस कालावधि (Δt) के लिए मान्य हो सकता है, जितने में ΔE और Δt का गुणन-फल, $h/2\pi$ के बराबर हो. सापेक्षता सिद्धांत के अनुसार, अधिकतम वेग, C, प्रकाश का होता है. कण का वेग तो C की अपेक्षा कम होगा ही. अतः, वह कण Δt समय में अधिक $C \times \Delta t$ दूरी तय करके ही नाभिकीय बलों का वहन कर सकता है. यह जानते हुए कि नाभिकानों के बीच की दूरी जो 10^{-12} से. मी. से कम ही होती है, में वाहक कण नाभिकीय बलों का वहन करते हैं, युकावा ने शक्तिशाली बलों के वाहक कण, पायोन, के द्रव्यमान का ऊर्जा तुल्यांक 140 MeV होने की भविष्यवाणी की थी. इसी द्रव्यमान सहित पायोन की प्रायोगिक खोज ने युकावा की अभिधारणा की पुष्टि कर दी और उन्हें वर्ष 1949 का नोबेल पुरस्कार प्राप्त हुआ. हाइजेनबर्ग के अनिश्चितता सिद्धांत की एक नयी व्याख्या की सफलता का यह परिणाम था. पायोन का भार प्रोटॉन के भार का लगभग 1/7 होता है.

क्षीण बल

एक बीटा–कण के उत्सर्जन में नाभिक के अंदर रहने वाला एक न्यूट्रॉन एक प्रोटॉन में परिवर्तित हो जाता है, और इसके साथ ही साथ एक न्यूट्रिनो का भी उत्सर्जन होता है. वह बल जिसके कारण न्यूट्रॉन का प्रोटॉन में परिवर्तन हो जाता है, उसे क्षीण शक्तिवाला बल कहते हैं. क्षीण–बलों की क्रिया में कुल आवेश की अक्षयता तो बनी रहती है, परंतु प्रोटॉन, इलेक्ट्रॉन और न्यट्रॉन की संख्या की अक्षयता बनी नहीं रह पाती है, जैसा कि शक्तिशाली अथवा विद्युच्चुंबकीय बलों की क्रिया के दौरान होता है. यह बल शक्तिशाली बल की अपेक्षा लगभग एक लाख गुना कम होता है. इन बलों की क्रिया में उत्सर्जित न्यूट्रिनो अथवा प्रतिन्यूट्रिनो को शक्तिशाली बल अथवा विद्युच्चुंबकीय बल प्रभावित नहीं कर पाते हैं. न्यूट्रिनो एक ऐसा कण होता है जिसे क्षीण बल ही प्रभावित करते हैं.

विद्युत्क्षीण बल

आधुनिक प्रयोगों में पदार्थ पर जब न्यूट्रिनो का प्रहार किया गया तो क्षीण बलों की क्रिया से ये इलेक्ट्रॉनों में परिवर्तित हो गये. इसके अतिरिक्त कुछ न्यूट्रिनो पदार्थ द्वारा न्यूट्रिनो के रूप में ही प्रकीर्णित हो गये. यह आवेशित पदार्थ द्वारा इलेक्ट्रॉनों के विद्युच्चुंबकीय प्रकीर्णन जैसा ही व्यवहार है. आधुनिक मान्यता है कि विद्युच्चुंबकीय बल तथा क्षीण बल किसी एक ही 'विद्युत्क्षीण बल' के अलग–अलग परिस्थितियों में दो रूप हैं.

जिस प्रकार विद्युच्चुंबकीय बलों का वाहक कण प्रकाशाणु होता है, तथा शक्तिशाली बलों का वाहक कण पायोन होता है, उसी प्रकार क्षीण बलों का भी कोई वाहक कण होना चाहिए. क्षीण बलों पर युकावा के तर्कों का प्रयोग करके इन बलों के वाहक कणों के द्रव्यमान की भी भविष्यवाणी कर दी गयी. वह बल जिसके कारण न्यूट्रिनो इलेक्ट्रॉन में परिवर्तित हो जाता है, उसका वाहक कण आवेशित होना चाहिए. ऐसे कण को 'W बोसान' कहा गया. वह बल जिसके द्वारा न्यूट्रिनो उसी रूप में प्रकीर्णित हो जाता है (अनावेशित धारा), उसका वाहक कण आवेश विहीन होना चाहिए, और उसका नाम 'Z बोसान'

दिया गया. (स्व. श्री सत्येंद्रनाथ बोस की सांख्यिकी का पालन करने वाला कण बोसान कहलाता है.) W और Z बोसानों का द्रव्यमान प्रोटॉन के द्रव्यमान से लगभग सौ गुना अधिक बताया गया. अतः इनके उत्पादन के लिए प्रोटॉन के समतुल्य ऊर्जा से लगभग सौ गुनी अधिक ऊर्जा की आवश्यकता होती है. अत्याधुनिक अत्यधिक ऊर्जाधारी त्वरकों में वर्ष 1983 में इन बोसानों की उपस्थिति की प्रायोगिक घोषणा की गयी. 'W बोसान' का द्रव्यमान प्रोटॉन की अपेक्षा 80 गने से अधिक तथा 'Z बोसान' का द्रव्यमान 90 गुने से अधिक पाया गया.

हैड्रॉन और लप्टॉन

ब्रह्मांड किरणों पर अनुसंधान करने वालों ने भिन्न-भिन्न प्रकार के कम अथवा अधिक आयु वाले अनेक कणों का पता लगा लिया है. इसके अतिरिक्त, आधुनिक त्वरकों द्वारा भी अनेक प्रकार के कणों को पहचान लिया गया है. इस प्रकार कुल मिला कर सौ से भी अधिक कणों के गुणों को याद रखने के लिए, इनके वर्गीकरण की आवश्यकता पड़ी. अतः, विभिन्न कणों को बलों के प्रभाव के अनुसार विभाजित किया गया. इलेक्ट्रॉन और न्यूट्रिनो जैसे कणों को जिन्हें शक्तिशाली बल प्रभावित नहीं करते हैं, 'लेप्टॉन' नाम दिया गया, तथा शक्तिशाली बलों से प्रभावित होनेवाले कणों को 'हैड्रॉन' कहा गया. हैड्रॉनों को भी दो वर्गों में बांटा गया. पायोन जैसे कणों को 'मेसॉन' नाम दिया गया. और प्रोटॉन, न्यूट्रॉन जैसे कणों को 'बेरिआन' कहा गया. इन कणों का अपना अंतरंगी कोणीय संवेग होता है. इस संवेग का मान प्लैंक स्थिरांक h का गुणक होता है. हैड्रॉनों के अंतर्गत बेरिआनों के गुणक का मान अर्द्धपूर्णांक, 0, 1, 2,... आदि, तथा मेसॉनों के गुणक का मान पूर्णांक, 0, 1, 2...आदि होता है. जितने लेप्टॉनों की खोज अब तक हुई है, सभी के अंतरंगी कोणीय संवेग का मान $h/2\pi$ पाया गया.

सौ से भी अधिक कणों के वर्गीकरण का काम लगभग वैसा ही था जैसा कि वर्ष 1889 में मेंडलीव ने रासायनिक तत्वों के वर्गीकरण का काम हाथ में लेकर आवर्त सारिणी की खोज की थी. आवर्त सारिणी की मदद से उस समय उसने कुछ तत्वों के परमाणु भार तथा रासायनिक गुणों की भविष्यवाणी भी कर दी थी, जिन्हें बाद में पहचाना गया था. वर्ष 1960–61 के बीच जब बेरिआन और मेसॉनों का वर्गीकरण किया गया तो इनमें भी मेंडलीव की सारिणी के जैसी अलग-अलग आवृत्ति पायी गयी. मेसॉनों में आवृत्ति अष्टवर्गी तथा बेरिआनों में दशवर्गी पायी गयी. इन सारिणियों की सहायता से कुछ बेरिआनों और मेसॉनों के आवेशों और द्रव्यमानों की भविष्यवाणी भी कर दी गयी, जिन्हें बाद में उच्च ऊर्जीय त्वरकों में पहचाना गया. इससे इन आवर्त सारिणियों के सिद्धांत की पुष्टि भी हो गयी.

मौलिक कणों के इतिहास की इस पृष्ठभूमि में वर्ष 1960 तक भौतिकविदों के सामने यह समस्या थी कि इतने सारे कण प्रकृति में किस प्रकार और किस पदार्थ से बनते हैं. जब तक इन कणों की खोज नहीं हुई थी, तब तक यही समझा जाता था कि प्रकृति में प्रोटॉन और इलेक्ट्रॉन के द्रव्यमानों के बीच के द्रव्यमान वाला कोई कण होता ही नहीं है. धनात्मक पूर्णांक आवेश प्रोटॉन में ही होता है, और इसी प्रकार ऋणात्मक पूर्णांक आवेश इलेक्ट्रॉन में ही होता है. आंशिक आवेश हो ही नहीं सकता है. अब, प्रोटॉन और इलेक्ट्रॉन के द्रव्यमानों के बीच, धनात्मक और ऋणात्मक, दोनों प्रकार के आवेश और द्रव्यमान वाले अनेक कणों का पता लग जाने के कारण, ऐसा विचार किया गया कि इन कणों का निर्माण करने वाले अत्याधिक सूक्ष्म कण होने चाहिए जिनके द्वारा प्रोटॉन और न्यूट्रॉन जैसे भारी और

दीर्घायु कणों के साथ-साथ अन्य हैड्रॉन भी बनते हों.

क्वार्क

वर्ष 1964 के आरंभ में मुरे गेलमान तथा जॉर्ज ज्वाइग, दो वैज्ञानिकों ने स्वतंत्र रूप से यह प्रस्ताव रखा कि आवर्त सारिणियों के विभिन्न हैड्रॉनों का निर्माण केवल तीन प्रकार के कणों द्वारा प्राकृतिक रूप से किया जा सकता है. इन मौलिक कणों का नाम उन्होंने क्वार्क रखा. क्वार्कों में से दो को उन्होंने 'अप' और 'डाउन' क्वार्क कहा जो रोमन अक्षर **u** और **d** के द्वारा प्रदर्शित किये जा सकते हैं. उनके अनुसार, 'अप क्वार्क' पर आवेश $+2/3$ तथा 'डाउन क्वार्क' पर $-\frac{1}{3}$ होना चाहिए. तीसरे क्वार्क का नाम उन्होंने 'स्ट्रेंज' (**s**) दिया जो डाउन क्वार्क से द्रव्यमान में भिन्न होते हुए भी $-\frac{1}{3}$ आवेश वाला होना चाहिए.

क्वार्क की अभिधारणा आरंभिक काल में सर्वमान्य नहीं हो सकी, क्योंकि कभी किसी ने आंशिक आवेश की कल्पना भी नहीं की थी और न ही कभी कोई ऐसा कण प्रायोगिक रूप से पाया ही गया था. इलेक्ट्रॉन के आवेश को आवेश की इकाई समझा जाता था और यह मानने का कोई कारण कभी उपस्थित नहीं हुआ था कि उससे कम, अर्थात आंशिक आवेश भी प्राकृतिक रूप से संभव हो सकता है. इसके अतिरिक्त, स्वतंत्र रूप से क्वार्क का पाया जाना आज तक संभव नहीं हो सका है.

मेंडलीव द्वारा निर्मित आरंभिक आवर्त सारिणी तत्वों के रासायनिक गुणों पर आधारित थी जिसमें आगे चल कर नयी नयी खोजों के साथ-साथ सुधार होते गये, और अब यह सारिणी इस धारणा पर सर्वमान्य हो गयी है कि नाभिक में प्रोटॉनों और न्यूट्रॉनों के समूह होते हैं और परिक्रमित इलेक्ट्रॉनों की कक्षाओं के विभिन्न वर्ग होते हैं. कुछ इसी प्रकार हैड्रॉनों की आवर्त सारिणियों को भी क्वार्क की धारणा से, समझने के प्रयास किये गये. यह माना गया कि बेरिआन तीन क्वार्कों से, तथा मेसॉन दो क्वार्क क्वार्क एवं प्रतिक्वार्क, से बने होते हैं. इन कणों में प्रतिक्वार्क भी सम्मिलित हैं. प्रतिक्वार्क, प्रतिपदार्थ होते हैं जो समान क्वार्क के साथ एक ही समय एक ही बिंदु पर एकत्रित हो जाने पर, जैसा कि पोजीट्रान के संबंध में बताया गया है, एक दूसरे का विलोपन करके दोनों के द्रव्यमान के समतुल्य ऊर्जा को विकिरण के रूप में परिवर्तित कर देते हैं. प्रतिक्वार्क का आवेश उसके क्वार्क का उल्टा होता है.

प्रोटॉन और न्यूट्रॉन को छोड़ कर बाकी हैड्रानों की आयु बहुत कम होती है. प्रोटॉन और न्यूट्रॉन के प्रतिपदार्थ-प्रतिप्रोटॉन, क्वार्कों को प्रतिक्वार्क में बदल देने से प्राप्त हो जाते हैं.

बेरिआनों को तीन क्वार्कों से निर्मित मान कर उनकी दशवर्गी आवर्त सारिणी को सफलता पूर्वक समझा जा सकता है. इसी प्रकार, मेसानों को दो क्वार्कों, क्वार्क एवं प्रतिक्वार्क द्वारा निर्मित मानकर उनकी अष्टवर्गी आवर्तसारिणी को भी सफलता पूर्वक समझा जा सकता है.

इलेक्ट्रानों की तरह क्वार्कों के प्रचक्रण का मान $h/4\pi$ मानकर बेरिआनों के प्रचक्रण का मान अर्द्धपूर्णांक, तथा मेसॉनों के प्रचक्रण का मान पूर्णांक सफलतापूर्वक समझा जा सकता है, क्योंकि तीन अर्द्धपूर्णांक मिल कर अर्द्धपूर्णांक, तथा दो अर्द्धपूर्णांक मिल कर पूर्णांक बनाते हैं. इस प्रकार, क्वार्क धारणा से हैड्रॉनों के प्रचक्रण भी सरलता से समझे जा सकते हैं.

क्वार्कों की प्रायोगिक पुष्टि

अब तक क्वार्कों द्वारा प्रोटॉनों और न्यूट्रॉनों के सैद्धांतिक रूप से ही निर्मित होने की चर्चा की गयी है. आइए, अब देखें कि क्या इनकी

कोई प्रायोगिक पुष्टि भी हुई है. यद्यपि आंशिक आवेशयुक्त किसी भी कण की स्वतंत्र रूप से उपस्थिति को अब तक सिद्ध नहीं किया जा सका है, फिर भी पिछले बीस वर्षों में हैड्रानों के अंदर बंधक बने हुए क्वार्कों की उपस्थिति के पर्याप्त प्रमाण प्राप्त हो चुके हैं.

वर्ष 1950 से शुरू होने वाले दशक में उच्च ऊर्जायुक्त प्रोटॉनों के प्रोटॉनों पर ही प्रहार द्वारा यह मालूम किया जा चुका था कि प्राटॉनों का व्यास 10^{-13} से. मी. के स्तर का होता है जो नाभिक के व्यास की अपेक्षा तो कम होता है, परंतु इलेक्ट्रॉनों के व्यास के से लगभग 100 गुना अधिक होता है. इस प्रकार प्रकृति में पाये जाने वाले कणों में इलेक्ट्रॉन का व्यास न्यूनतम होता है. इलेक्ट्रॉन को अधिक ऊर्जा देकर उनका पदार्थ तरंगदैर्ध्य (द ब्रोगली) इच्छानुसार बहुत कम किया जा सकता है और तब उन्हें टोह लेने वाले पत्थर की तरह प्रोटॉन के भीतर फेंका जा सकता है.

वर्ष 1960 से शुरू होने वाले दशक के आरंभिक वर्षों में केलीफोर्निया (सं. रा. अ.) में दो मील लंबे एक त्वरक का निर्माण किया गया जिसमें इलेक्ट्रॉन को 2000 MeV से भी अधिक ऊर्जा दी जा सकती है. इस ऊर्जा का इलेक्ट्रॉन 10^{-13} से. मी. तक के अंदर यदि कोई विभेद हो तो उसका विश्लेषण कर सकता है. एक प्रयोग में इस ऊर्जा के एक इलेक्ट्रॉन-पुंज का प्रोटॉनों पर प्रहार किया गया. इस प्रयोग ने अंतिम रूप से यह सिद्ध कर दिया कि प्रोटॉन $\frac{1}{2}$ प्रचक्रण वाले सूक्ष्म कणों द्वारा निर्मित होते हैं इसके साथ-साथ जेनेवा, स्थित CERN प्रयोगशाला में, इलेक्ट्रॉनों के स्थान पर न्यूट्रॉनों द्वारा प्रोटॉनों पर प्रहार किया गया जिससे यह सिद्ध हो गया कि इन सूक्ष्म कणों का आवेश प्रोटॉन के आवेश की अपेक्षा 2/3 तथा $-\frac{1}{3}$ होता है. इन प्रयोगों ने क्वार्क अभिधारणा को अंतिम रूप से प्रमाणित कर दिया, और सूक्ष्म-कण भौतिकी के विकास में एक नये युग का सूत्रपात हुआ.

ग्लूऑन

आंशिक आवेशयुक्त क्वार्कों के साथ-साथ इन प्रयोगों ने यह भी सिद्ध कर दिया कि प्रोटॉन में अनावेशित कण भी होते हैं जिन्हें 'ग्लूआन' नाम दिया गया, क्योंकि ये कण क्वार्कों को आपस में उसी प्रकार प्रोटॉन के भीतर ही चिपकाये (ग्ल) रखते हैं जिस प्रकार शक्तिशाली बलों के वाहक कण, पायोन नाभिकानों को नाभिक के अंदर बांधे रखते हैं. यह भी पाया गया है कि क्वार्क प्रोटॉन के अंदर अपेक्षाकृत स्वतंत्र रहते हैं, परंतु जब उन्हें एक-दूसरे से अलग करने का प्रयास किया जाता है, तो ग्लूआन बल प्रबल बन जाते हैं.

क्वार्क और ग्लूआन के रंग

परमाणु में नाभिक के चारों ओर परिक्रमा करने वाले इलेक्ट्रॉनों की प्रमात्रा ऊर्जा को समझने के लिए पॉली ने अपवर्जन सिद्धांत का प्रस्ताव रखा था जिसके अनुसार एक परमाणु में एक ऊर्जा, प्रचक्रण, कक्षा युक्त प्राचलों का एक ही इलेक्ट्रॉन संभव है; उसी परमाणु में दूसरे इलेक्ट्रॉन के लिए प्राचलों के वही मान वर्जित हैं. इस सिद्धांत को क्वार्कों पर प्रयुक्त करने से ऐसा लगा कि बेरिआन, में तीन क्वार्क एक ही ऊर्जा और प्रचक्रण के होते हैं, जो संभव नहीं है. इस कठिनाई को दूर करने के लिए यह प्रस्ताव रखा गया कि प्रत्येक क्वार्क और ग्लूआन में तीन प्रकार के रंग (एक नया प्राचल), भी होते हैं. इन रंगों को सरलता के लिए लाल, पीला और नीला, नाम दिया गया है. इस प्रकार, बेरिआन में तीन क्वार्क एक ही ऊर्जा और दिशा वाले प्रचक्रण से युक्त होने पर भी अलग-अलग रंग युक्त होने के कारण एक ही सूक्ष्म कण में एक साथ रह सकते हैं, क्योंकि तब इनके प्राचलों के सब मान एक से नहीं रहेंगे.

रंगों के बारे में अन्य प्रस्ताव भी दिये गये, जैसे, प्रतिक्वार्क का रंग भी प्रतिरंग होता है, तीनों रंग आपस में आकर्षित होकर रंग विहीन बेरिआन बनाते हैं, रंग और प्रतिरंग आपस में आकर्षित होकर रंगविहिन मेसॉन बनाते हैं (अर्थात सूक्ष्म कण रंग विहीन होते हैं), समान रंग एक-दूसरे का विकर्षण करते हैं आदि. रंगों के इन समूहों वाले तीन क्वार्क मिल कर दशवर्गी आवर्त सारिणी के बेरिआन, तथा अष्टवर्गी आवर्त सारिणी के मेसॉन बनाते हैं उच्च ऊर्जीय इलेक्ट्रॉन और पाजीट्रॉन जब एक ही समय एक ही बिंदु पर आ जाते हैं तो विलोपन की क्रिया में पैदा हुए नाभिकीय कणों और म्यूआन-प्रतिम्यूआन युगल की संख्या के अनुपात को मापने से क्वार्कों में तीन रंग के गुणों की अब प्रायोगिक पुष्टि हो चुकी है.

प्रमात्रा रंगगतिकी

जिस प्रकार प्रमात्रा इलेक्ट्रोगतिकी आवेशित कणों की गति की व्याख्या करती है, उसी प्रकार तीन-तीन रंगों से युक्त कणों की व्याख्या करने के लिए एक नयी गतिकी रचना की गयी जिसे 'प्रमात्रा रंग गतिकी' कहते हैं. (इसे अंग्रेजी भाषा में क्वांटम क्रोमोडायनामिक्स कहते हैं). जिस प्रकार प्रमात्रा इलेक्ट्रोगतिकी में विद्युच्चुंबकीय बलों का वाहक कण द्रव्यमान रहित, प्रचक्रण एक युक्त प्रकाशाणु होता है, उसी प्रकार, प्रमात्रा रंग-गतिकी में रंग बलों का वाहक कण द्रव्यमान रहित, प्रचक्रण एक युक्त ग्लूआन माना गया है. प्रमात्रा इलेक्ट्रोगतिकी में त्वरित आवेशित कण जिस प्रकार प्रकाशाणु के समूहों का उत्सर्जन करते हैं, उसी प्रकार प्रमात्रा, रंगगतिकी में त्वरित रंगयुक्त कण (क्वार्क) ग्लूऑन के समूहों का उत्सर्जन करते हैं.

अन्य प्रकार के क्वार्क

क्वार्क बलों के सैद्धांतिक एवं प्रायोगिक अध्ययन से ज्ञात होता है कि क्वार्कों की दूरी कम होने पर बल क्षीण होते हैं, परंतु क्वार्कों की दूरी बढ़ जाने पर ये बल अधिक प्रबल हो जाते हैं. इसके अतिरिक्त, 1000 MeV के प्रकाशाणु को क्वार्क आपस में प्रबल रूप से बद्ध दिखायी पड़ते हैं, परंतु इससे अधिक ऊर्जा के प्रकाशाणु को क्वार्क अपेक्षाकृत स्वतंत्र रूप से दिखायी पड़ते हैं.

क्वार्कों के इस संक्षिप्त विवरण की पृष्ठभूमि में आइए अब हम क्षीण बलों पर एक दृष्टि फिर से डाल लें. बीटा-सक्रियता में नाभिक के अंदर एक न्यूट्रॉन एक प्रोटॉन में परिवर्तित हो जाता है. इसे यदि क्वार्क के संदर्भ में समझें तो सिद्ध होता है कि क्षीण बलों के द्वारा किये गये न्यूट्रॉन क्षय में एक डाउन क्वार्क जिसका आवेश $(-1/3)$ होता है, $(+2/3)$ आवेश के अप क्वार्क में परिवर्तित हो जाता है. यह परिवर्तन वैसा ही है जैसा कि इलेक्ट्रॉन एवं इलेक्ट्रॉन-न्यूट्रिनो, तथा म्यूआन एवं म्यूआन-न्यूट्रिनो के बीच पाया जाता है. इस परिवर्तन को देख कर ही विद्युत्क्षीण बलों की परिकल्पना की गयी थी और उनके संबंध में अनुसंधान कार्य किये गये थे.

न्यूट्रिनो दो प्रकार के होते हैं, 'इलेक्ट्रॉन-न्यूट्रिनो' तथा 'म्यूआन-न्यूट्रिनो'. म्यूआन कण भी क्षीण बलों से ही प्रभावित होने वाला, इलेक्ट्रॉन के समान ही परंतु इससे अधिक द्रव्यमान युक्त कण होता है जिसकी खोज लगभग 50 वर्ष पहले हो गयी थी. दोनों प्रकार के न्यूट्रिनो अलग-अलग होते हैं. म्यूआन-न्यूट्रिनो म्यूआन में ही परिवर्तित हो सकता है, इलेक्ट्रॉन में नहीं. इससे यह ज्ञात होता है कि लेप्टानों के दो अलग-अलग परिवार होते हैं, जिनका आपस में मेल नहीं होता है.

लेप्टॉनों के तो दो परिवार निश्चित हो गये, परंतु क्वार्कों का एक ही परिवार (u, d) पाया गया. इससे यह प्रश्न उठा कि क्या प्रकृति लेप्टॉन और क्वार्क में भेदभाव बरतती है? क्या स्ट्रेंज क्वार्क अकेला ही है? क्या इसका कोई साथी नहीं

होता है जिसमें वह क्षीण बलों के प्रभाव से परिवर्तित हो सके? इससे यह अनुमान लगाया गया कि प्रकृति में एक चौथी प्रकार का क्वार्क भी होना चाहिए जिस पर आवेश +2/3 हो और वह स्ट्रेंज क्वार्क का जोड़ीदार हो. इसका नामकरण भी 'चार्म्ड क्वार्क' हो गया. क्षीण बलों के प्रभाव से स्ट्रेंज (s); और चार्म्ड (C) का आपस में परिवर्तन भी मान लिया गया.

इस खोज के फलस्वरूप वर्ष नवंबर 1974 में दो प्रयोगशालाओं में (SLAC तथा ब्रुकहेवन) स्वतंत्र रूप से एक मेसॉन देखा गया जिसका द्रव्यमान 3095 MeV था. बाद में इसकी पुष्टि इटली की प्रयोगशाला में भी कर दी गयी. यह मेसॉन चार्म्ड क्वार्क–चार्म्ड प्रतिक्वार्क के समूह से निर्मित हुआ पाया गया. इस क्वार्क की खोज ने इस अभिधारणा को सशक्त समर्थन प्रदान किया कि विद्युच्चुंबकीय बल तथा क्षीण बल का उद्गम कोई एक ही विद्युत्क्षीण बल होता है जो विविध परिस्थितियों में दो रूप धारण कर लेता है. इस खोज ने शक्तिशाली बलों को गहराई से समझने में भी बहुत सहायता की है. बाद में, अन्य मेसॉन, चार्म्ड क्वार्क तथा अन्य प्रकार के प्रतिक्वार्कों के समूह से निर्मित क्वार्क भी पहचान लिये गये.

चार्म्ड–क्वार्क की खोज से भौतिकविदों को थोड़ा कौतूहल हुआ कि इसका द्रव्यमान इतना अधिक 1500 MeV, प्रोटॉन के द्रव्यमान 931 MeV से डेढ़ गुने से अधिक क्यों है? परंतु इससे उन्हें बहुत संतोष भी हुआ कि लेप्टॉनों की तरह क्वार्कों के भी दो परिवार होते हैं तथा प्रकृति क्वार्कों और लेप्टॉनों के परिवारों को पूर्ण करने में भेदभाव नहीं बरतती है. परंतु यह संतोष अल्पकालिक ही सिद्ध हुआ.

वर्ष 1975 में एक अन्य लेप्टॉन को पहचाना गया जिसका द्रव्यमान 2000 MeV के लगभग पाया गया, अर्थात प्रोटॉन से लगभग दो गुना अधिक. इसका नाम ग्रीक अक्षर 'टॉव' दिया गया. इसके साथी टॉव न्यूट्रिनो की भी बाद में खोज कर ली गयी. टॉव न्यूट्रिनो, इलेक्ट्रॉन– और म्यूआन–न्यूट्रिनो से भिन्न पाया गया.

लेप्टॉनों के घटक नहीं देखे गये हैं. ये क्वार्कों द्वारा निर्मित नहीं होते हैं, और शक्तिशाली बलों का इन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है. जिस प्रकार म्यूआन (वर्ष 1936 में खोजा गया) घटकहीन होते हुए भी इलेक्ट्रॉन से कई गुना भारी होता है, 'टॉव' भी घटकहीन होते हुए भी म्यूआन से भी कई गुना भारी होता है. इलेक्ट्रॉन और म्यूआन की तरह इस पर भी इकाई ऋणावेश होता है.

लेप्टॉनों के तीसरे परिवार के पता चलते ही क्वार्कों के भी तीसरे परिवार की खोज आरंभ हो गयी और वर्ष 1977 में 9450 MeV द्रव्यमान के एक मेसॉन को अत्यधिक ऊर्जित प्रोटॉनों पर ही प्रहार की क्रिया में पहचाना गया. इसका नाम ग्रीक अक्षर 'एप्सिलोन' पर रखा गया.

जिस क्वार्क–प्रतिक्वार्क के युगल द्वारा एप्सिलोन मेसॉन निर्मित पाया गया, उस पर –1/3 था. उस क्वार्क का नाम 'बाटम' (b) दिया गया. टॉव लेप्टॉन की तरह इस क्वार्क की खोज के साथ क्वार्कों में तीसरे परिवार की खोज आरंभ हो गयी. इस तीसरे परिवार के अन्य सदस्यों की खोज की जा रही है. इस पर आवेश +2/3 होना चाहिए. यह अनुमान लगा कर कि इस का द्रव्यमान अन्य सभी क्वार्कों से अधिक होना चाहिए इसका नाम 'टाप' क्वार्क दे दिया गया है.

अधिकाधिक द्रव्यमानधारी कणों की खोज के लिए प्रोटॉन, इलेक्ट्रॉन जैसे दीर्घजीवी प्राकृतिक कणों को अधिकाधिक ऊर्जित करने वाले त्वरकों की आवश्यकता उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही है. इनकी निर्माण लागत बहुत अधिक है. उन्नत

देशों में इनके निर्माण भी किये जा रहे हैं, परंतु अब तक टाप क्वार्क (t) की प्रायोगिक प्राप्ति नहीं हो सकी है.

प्रोटॉन से आरंभ करके हम प्रकृति के सूक्ष्मतम आयामों तक पहुंचने का प्रयास कर रहे हैं. मायावी प्रकृति अपने सूक्ष्मतम आयामों में अभी और क्या-क्या रहस्य छुपाये बैठी है, भविष्य ही बतलायेगा.

यह तो रही भविष्य की बात. हजारों वर्ष पहले भारतीय दार्शनिक कपिल मुनि ने अपने सांख्य शास्त्र में प्रकृति को परमाणिक बतलाया है और कहा है कि परमाणुओं में सत्व, रज और तम, तीन प्रकार के गुणों के कारण अव्यक्त प्रकृति के भौतिक परमाणु आपस में मिलकर क्रमशः द्वाणु, त्रस्सणु आदि बनाते हैं. आकाश (दिक्काल) के परमाणु भी प्रकृति के इन्हीं परमाणुओं के संयोजन से निर्मित होते हैं, जिसमें हम सब के साथ-साथ प्रकाश के परमाणु भी संचरण करते हैं. अव्यक्त प्रकृति के साठ परमाणु संयुक्त होकर पदार्थ का सूक्ष्मतम कण बनाते हैं. क्वार्कों के भी तीन रंग होते हैं. उनके तथा लेप्टॉनों के तीन-तीन परिवार होते हैं. अब देखना है कि प्राचीन दर्शन शास्त्र का आधुनिक विज्ञान कहां तक खंडन या मंडन करता है.

बुद्धि कौशल की परख

अगले दो अंकों के बाद इस स्तंभ के स्थान पर हम दो नये स्तंभ आरंभ करेंगे इनके शीर्षक होंगे 'आइए समझें' और 'विज्ञान पहेली'. 'आइए समझें' के अंतर्गत किसी सामान्य उपकरण जैसे रेफरीजरेटर, रेडियो, स्कूटर आदि में से एक के बारे में सामान्य तकनीकी जानकारी दी जायेगी जोकि आपको उसके इस्तेमाल करने और उसमें आनेवाली साधारण खराबियों को समझने में और संभव हो तो सुधार सकने में सहायक हो. इसी के साथ उसके संबंध में आपके पत्रों के आधार पर जिज्ञासा एवं प्रश्नों के उत्तर भी इसमें दिये जायेंगे. आपसे अनुरोध है कि हम किन उपकरणों को इसमें लें और उनके बारे में अपने प्रश्न और जिज्ञासाओं से हमें अवगत करायें. इस स्तंभ का पहला कड़ी होगी 'रेफरीजरेटर' आपके पत्रों का हमें इंतजार है.

दूसरे स्तंभ में हम एक "विज्ञान पहेली" देंगे. सही उत्तर भेजनेवाले पहले 5 पाठकों को हम "वैज्ञानिक" पत्रिका एक वर्ष तक निःशुल्क भेजेंगे और उनके नाम भी प्रकाशित करेंगे. जिन पाठकों ने वार्षिक चंदा भेजा है उन्हें सूचित किया जायेगा कि उसके समाप्त होने से एक वर्ष तक उन्हें पत्रिका निःशुल्क भेजी जायेगी. **—संपादक**

---

1. अनेकों बीमारी उत्पन्न करनेवाले जीवाणु दूषित जल के माध्यम से शरीर में प्रवेश करते हैं. जल के माध्यम से फैलने वाली इन बीमारियों के फैलने की कब संभावना अधिक होती है?

(अ) वर्षा के मौसम में (ब) नगरों में उपलब्ध जल से (स) अधिक जल पीने वाले व्यक्तियों में (द) गर्मी में, पानी की कमी होने के कारण

2. आपको निम्न चार बीमारियों से पीड़ित चार मरीजों से मिलने अस्पताल जाना है. इनमें से कौन सी बीमारी आपको लगने की सबसे कम संभावना है?

(अ) कैंसर (ब) तपेदिक (स) मीजिल्स (द) गलसुये (मम्प्स)

3. निम्न में से एक बीमारी ऐसी है जिसके लिए बहुत लंबे समय तक इलाज करना अनिवार्य नहीं है, वह कौन सी है?

(अ) कुष्ठ रोग (ब) गठिया ज्वर (स) टाइफाइड (द) तपेदिक.

4. पटाखों और आतिशबाजी में लाल रंग उत्पन्न करने के लिए निम्न में से किस धातु का प्रयोग किया जाता है?

(अ) सोडियम (ब) स्ट्रॉन्शियम (स) क्रोमियम (द) बेरियम

5. निम्न सभी धातुएं बहुमूल्य हैं, इनमें से किस के बिना बड़े पैमाने पर खाद उत्पादन संभव नहीं है?

(अ) चांदी (ब) सोना (स) थोरियम (द) प्लेटिनम.

6. सबसे कठोर मिश्र धातु के निर्माण में उपयोग में आनेवाली वह कौन सी धातु है जो केवल हीरे से ही सख्ती में कम होती है

(अ) टाइटेनियम (ब) टेन्टेलम (स) बोरॉन (द) टंगस्टन.

7. निम्न हल्की धातुओं में से किसका प्रयोग वायुयानों के निर्माण में एल्यूमिनियम के बाद सर्वाधिक होता है?

(अ) बेरीलियम (ब) टाइटेनियम (स) (स) मेगनीशियम (द) मैंगनीज

8. खाद्य पदार्थ के रूप में उपयोग के अलावा निम्न में से किस उद्योग को मछली पकड़ने के व्यवसाय से लाभ होता है?

(अ) चमड़ा (ब) गोंद (स) दवाएं (द) उपरोक्त तीनों को.

(शेष पृष्ठ 38 पर देखें)

सिद्धांत / सूत्र / समीकरण

आइवन बी. राम

रिएक्टर कंट्रोल प्रभाग, भा. प. अ. कें., बंबई–400 085.

गैलिलियो गैलीली :

गैलीलियो (1564–1642) एक इतालवी खगोलशास्त्री, गणितज्ञ एवं भौतिकविज्ञानी थे. वास्तव में हम उनको आधुनिक भौतिकी का जन्मदाता मान सकते हैं. उनका मुख्य योगदान गणितशास्त्र एवं दूरबीन से ग्रहों की गति का अध्ययन है. पिंड की गति का सही विश्लेषण सर्वप्रथम गैलीलियो ने ही किया. जिसका परिष्कार बाद में न्यूटन ने किया.

गैलीलियो का सापेक्षवाद :

सापेक्षवाद का संबंध सापेक्ष गति से है. पिंड की गति का दर्शक (निरीक्षक) की गति से क्या संबंध है इसका उत्तर सर्वप्रथम गैलीलियो के परावर्तनों (ट्रान्सफॉर्मेशन) से मिलता है, जो निम्न सूत्रों (1, 2, 3, 4) से प्रदर्शित है.

$$x' = x - vt \qquad (1)$$

$$y' = y \qquad (2)$$

$$z' = z \qquad (3)$$

$$t' = t \qquad (4)$$

अर्थात्, पिंड के निर्देशांक एक संदर्भ प्रणाली (x,y,z,t) से दूसरी संदर्भ प्रणाली (x',y',z',t') में जाने पर उपर्युक्त समीकरणों से संबंधित हैं. जहां v पिंड की गति है. दूसरे शब्दों में यह नियम बताता है कि, समानगति से गतिमान विभिन्न प्रणालियों में गति के नियम नहीं बदलते हैं. न्यूटन ने इसी सापेक्षवाद को अपनी गतिविज्ञान का आधार माना. बाद में बीसवीं शती में आइंस्टाइन ने सापेक्षवाद संबंधी नयी मान्यताएं प्रस्तुत कीं जिनसे यह सिद्ध होता है कि गैलीलीय सापेक्षवाद केवल उन पिंडों के लिए सत्य है जिनकी गति प्रकाश की गति की तुलना में नगण्य है.

कॉर्ल फ्रेडरिक गॉस :

गॉस (1777–1855) एक महान जर्मन गणितज्ञ था. ज्यामिति, अंकगणित, बीजगणित, विद्युत–चुंबकत्व, यांत्रिकी आदि में उसका मुख्य योगदान है. उनके नाम से संबंधित कुछ प्रमेय आदि नीचे दिये हैं.

गॉस डाइवर्जेंस प्रमेय :

यह प्रमेय दैनिक राशियों के प्रवाह (फ्लक्स) से संबंधित है. यह एक गणितीय प्रमेय है, और उन सब दैशिक राशियों पर लागू होता है, जो किसी भौतिक क्षेत्र को प्रदर्शित करती हैं. (जैसे विद्युत क्षेत्र), चुंबकीय क्षेत्र, प्रवाहित द्रव, तथा तरंग–क्षेत्र आदि) इस प्रमेय का गणितीय रूप सूत्र (5) है

$$\iiint \operatorname{div}\bar{A}\, dv = \iint \bar{A}\cdot ds \quad \text{---- (5)}$$

$$\int E\cdot ds = 4\pi \text{ (सतह S से घिरा आवेश)} \cdots (6)$$

$$\operatorname{div} E = 4\pi\rho \quad \text{---- (7)}$$

$$y = \frac{h}{\sqrt{\pi}}\, e^{-h^2x^2} \quad \text{----- (8)}$$

उपर्युक्त प्रमेय की व्याख्या इस प्रकार है: $\bar{A}$ एक दैशिक राशि है जो किसी क्षेत्र में व्याप्त है, और किसी सतह S से घिरी है. यदि सतह से घिरा आयतन V हो, तो $\bar{A}$ के डाइवर्जेंस का आयतनीय समा-

कलन, $\overline{A}$ के समाकलन (इंटीग्रेशन) के बराबर होता है.

नोट : डाइवर्जेंस एक अदैशिक राशि है, जो बताती है, कि क्षेत्र के किसी बिंदु पर, प्रति आयतन प्रवाह (फ्लक्स) का मान क्या है.

गॉस का नियम :

गॉस का यह नियम स्थैतिक विद्युत क्षेत्र से संबंधित है. प्रत्येक विद्युत आवेश एक विद्युत–क्षेत्र से संलग्न होता है, जिसको बलरेखाओं से प्रदर्शित कर सकते हैं. ये बलरेखाएं एक दैशिक क्षेत्र को प्रदर्शित करती हैं. कल्पना करें कि विद्युत आवेशों का एक पुंज सतह S से घिरा है. इस नियम के अनुसार विद्युत क्षेत्र की तीव्रता का सतही समाकलन, कुल विद्युत आवेश की मात्रा के बराबर होता है. इसी नियम को गणितीय रूप में सूत्र (6) से प्रदर्शित कर सकते हैं.

यह नियम विद्युत क्षेत्र E की गणना करने में अत्यंत उपयोगी है, विशेषतया जहां क्षेत्र की ज्यामिति सरल हो.

नोट : गॉस के इस नियम को गॉस की प्रमेय (5) की सहायता से समीकरण (7) रूप में भी प्रदर्शित कर सकते हैं.

जहां ९ आवेश का आयतनीय घनत्व है. यदि आवेश संपूर्ण आयतन में वितरित न होकर किन्ही बिंदुकों पर केंद्रित हो तो सूत्र (7) में परिवर्तन करना पड़ता है.

गॉस का त्रुटि वितरण (एरर डिस्ट्रिब्यूशन) :

भौतिक राशियों के मापन में विभिन्न प्रकार की त्रुटियां संभव हैं. कुछ त्रुटियों का संबंध उपकरण आदि से है. परंतु कुछ त्रुटियां ऐसी हैं जिनका संबंध उपकरण के परिसर हैं, जिनको नियंत्रित नहीं किया जा सकता है. प्रयोगों द्वारा सिद्ध होता है कि इस प्रकार की त्रुटियों का अनुमान प्रायिकता के सिद्धांत के आधार पर कर सकते हैं. गॉस ने इसके लिए सूत्र (8) का स्थापन किया.

इस सूत्र में y इस राशि की बारंबारता (फ्रीक्वेन्सी) है, जिसमें संभावित त्रुटि x है. h का संबंध औसत त्रुटि (शून्य) के दोनों ओर अन्य त्रुटियों के विस्तार से है. इसे मानक विचलन (स्टैंडर्ड–डेविएशन) कहते हैं. सूत्र (8) को सामान्य–वितरण (नॉरमल–डिस्ट्रीब्यूशन) भी कहते हैं.

बुद्धि कौशल की परख (पृष्ठ 36 के आगे)

9. लिपस्टिक के निशानों को कपड़ों से निकालने के लिए आपको क्या इस्तेमाल करना चाहिए ?

(अ) कार्बन टेट्राक्लोराइड और ग्लिसरीन (ब) ग्लिसरीन और ग्रीज (स) डिटरजेंट (द) गर्म पानी और साबुन.

10. बालों को रंगते समय यदि यह रंग आपके कपड़ों पर लग जाये तो उसके दाग छुड़ाने में निम्न में से कौन सी विधि सबसे अधिक सहायक होगी?

(अ) साबुन और पानी (ब) ब्लीचिंग पाउडर (स) कोई सरल उपाय नहीं (द) पेट्रोल.

उत्तर :

1. (अ), 2. (अ), 3. (स), 4. (ब) 5. (द), 6. (द), 7. (ब), 8. (द), 9. (अ), 10. (स).

—डॉ. उमेश मिश्र
64, शांतिनिकेतन, अणुशक्तिनगर,
बंबई–400094.

बना कर देखें

इलेक्ट्रॉनिक प्रकाश स्तर निर्धारक

अशोक कुमार महंत

डी. आर. पी., भा. प. अ. केंद्र, बंबई–400 085.

अपर्याप्त प्रकाश होने के कारण कई बार क्रिकेट मैच समय से पूर्व ही बंद करना पड़ता है. कई बार अम्पायर व खिलाड़ियों के मध्य प्रकाश स्तर को लेकर मतभेद भी हो जाता है. इस समस्या का निदान इलेक्ट्रॉनिक प्रकाश मापक उपकरण की सहायता से किया जा सकता है. वास्तव में आजकल ऐसे उपकरण का प्रयोग भी किया जाने लगा है. प्रस्तुत है इसी प्रकार के एक सरल इलेक्ट्रॉनिक प्रकाश स्तर निर्धारक का परिपथ.

इसके द्वारा आप एक स्तर निर्धारित कर सकते हैं. प्रकाश तीव्रता यदि इसके नीचे हो जाती है तो एक सिग्नल से इसकी सूचना मिलती है. इस परिपथ में एक लाल प्रकाश उत्सर्जक डॉयोड का प्रयोग किया गया है, जो प्रकाश कम होने पर जल उठता है.

इस प्रकार के उपकरण का उपयोग फोटोग्राफी एवं रंगमंच में मंच पर प्रकाश व्यवस्था के लिए भी किया जा सकता है.

इस परिपथ में प्रकाश सुग्राही प्रतिरोध का प्रयोग किया गया है. इसका मान प्रकाश की तीव्रता बढ़ने पर घटता है. चित्र–1 में R_2 व R_3 (प्रकाश सुग्राही प्रतिरोध) की सहायता से विभव विभाजक बनाया गया है. 'ब' बिंदु पर विभव का मान

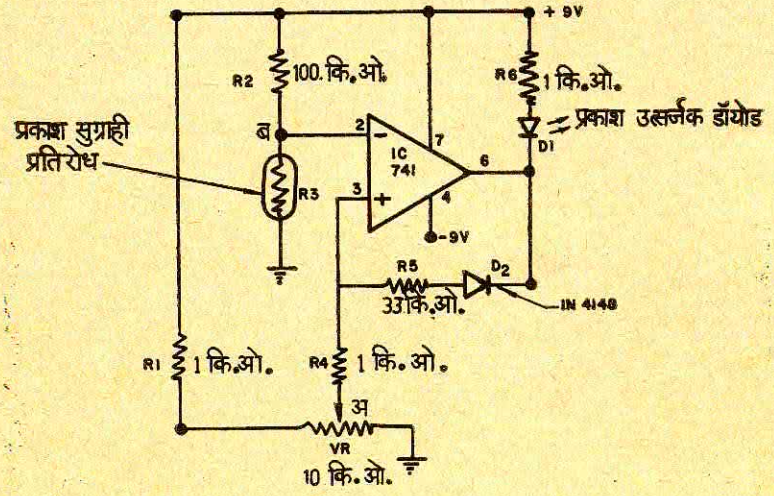

चित्र -1.

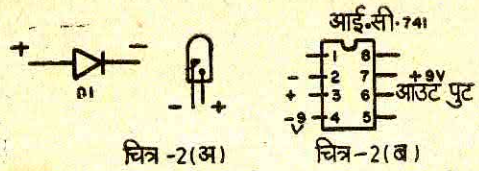

चित्र -2(अ) चित्र-2(ब)

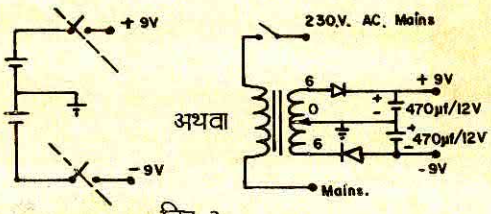

चित्र-3.

$I(R_3/(R_2+R_3))$ है जो कि R_3 के मान के साथ परिवर्तित होता है.

इस विभव की तुलना एक अन्य निर्धारित विभव से की जाती है, जो कि VR के परिवर्ती बिंदु 'अ' से प्राप्त होता है. ऑपरेशनल प्रवर्धक 741 का प्रयोग 'अ' व 'ब' बिंदुओं के विभव की तुलना करने के लिए किया गया है. 741 ऑपरेशनल प्रवर्धक का प्रवर्धन गुणांक 10,000 से अधिक है व धारा सुग्राहकता लगभग 50 माइक्रो एम्पीयर है. इसलिए 'अ' व 'ब' बिंदुओं का विभव ऑपरेशनल प्रवर्धक से प्रभावित नहीं होता है. ऑपरेशनल प्रवर्धक का आउट-पुट इस परिपथ में केवल +8 वोल्ट या −8 वोल्ट हो सकता है, इसके अवाला अन्य मान संभव नहीं है, ऐसा ऑपरेशनल प्रवर्धक के उच्च प्रवर्धन गुणांक के कारण संभव होता है.

यदि किसी अवस्था में प्रकाश के उचित स्तर पर 'ब' बिंदु का विभव 'अ' बिंदु के नियत विभव से कम है तो आउटपुट +8 वोल्ट होगा एवं प्रकाश उत्सर्जक डायोड D_1 प्रकाशमान नहीं होगा. यदि 'अ' बिंदु के विभव का मान इस प्रकार निर्धारित किया गया है कि यदि 'ब' बिंदु पर इतना विभव R_3 पर पड़ने वाले प्रकाश की तीव्रता वांछित स्तर से कम होने पर हो तो आउटपुट का मान −8 वोल्ट हो जायेगा व प्रकाश उत्सर्जक डायोड प्रकाशमान होकर यह संकेत देगा कि प्रकाश तीव्रता निर्धारित स्तर से कम है. VR के द्वारा प्रकाश तीव्रता के भिन्न-भिन्न स्तर निर्धारित किये जा सकते हैं. व VR पर एक नॉब लगाकर मानांकित किया जा सकता है.

ऑपरेशनल प्रवर्धक दो शक्ति स्त्रोतों की सहायता से कार्य करता है. चित्र-3 में दिखाये गये परिपथ द्वारा बैटरी या मेनस् द्वारा ± 9 वोल्ट प्राप्त कर सकते हैं. परिपथ में प्रयुक्त घटक बाजार में आसानी से उपलब्ध हैं. प्रकाश सुग्राही प्रतिरोध, (LDR- लाइट डिपेंडेंट रजिस्टरों) के नाम से व प्रकाश उत्सर्जक डॉयोड LED के नाम से प्रचलित है. परिपथ बनाने का कुल खर्च 50 रु. से कम है. बैटरी एवं डब्बा जिसमें परिपथ लगाना है, का मूल्य अलग है. प्रकाश सुग्राही प्रतिरोध को इस प्रकार से लगाना चाहिए कि प्रकाश सीधा उस पर पड़ता रहे.

घटक सूची

आई. सी. 741-1 (आठ पिन वाला पैकेज)

प्रतिरोध

1 कि. ओहम के तीन, 10, 33 व 100 कि. ओहम के एक-एक. प्रकाश सुग्राही प्रतिरोध-1, परिवर्ती-प्रतिरोध .. -1.

डायोड

-1, लाल प्रकाश उत्सर्जक डॉयोए-1

-2, IN 4148 या समान -1

साधारण उपयोगी (GENERAL PURPOSE) प्रिंटेड कार्ड, एक या दो आई. सी. के लिए.

हुक-अप तार, सोल्डरिंग आयरन, सोल्डर धातु आदि.

इंडियन रेअर अर्थ्स लिमिटेड

पिल कोर्ट, छठी मंजिल, 111, महर्षि कर्वे रोड,
बंबई–400020

फोन : 290914–15 टेलेक्स : 001–3122

तार : रेअरअर्थ बम्बई

❋

—: हमारे उत्पादन :—

इलमेनाइट

टाइल

जरकॉन

जरकॉन फ्लोर (जिरफ्लोर)

जिरकोनियम ऑक्साइड

जिरकोनियम ऑक्सीक्लोराइड

गारनेट

सिलीमेनाइट

रेअर अर्थ्स क्लोराइड

रेअर अर्थ्स फ्लोराइड

रेअर अर्थ्स ऑक्साइड एवं साल्टस्

सीरियम ऑक्साइड

सीरियम हाइड्रेट

सीरियम कार्बोनेट

ट्राइसोडियम फास्फेट (डोडेकाहाइड्रेट)

थोरियम/सीरियम नाइट्रेट – थोरियम ऑक्साइड

DEVISING THE RIGHT TECHNOLOGY MIX FOR RESULTS THAT MATTER MOST

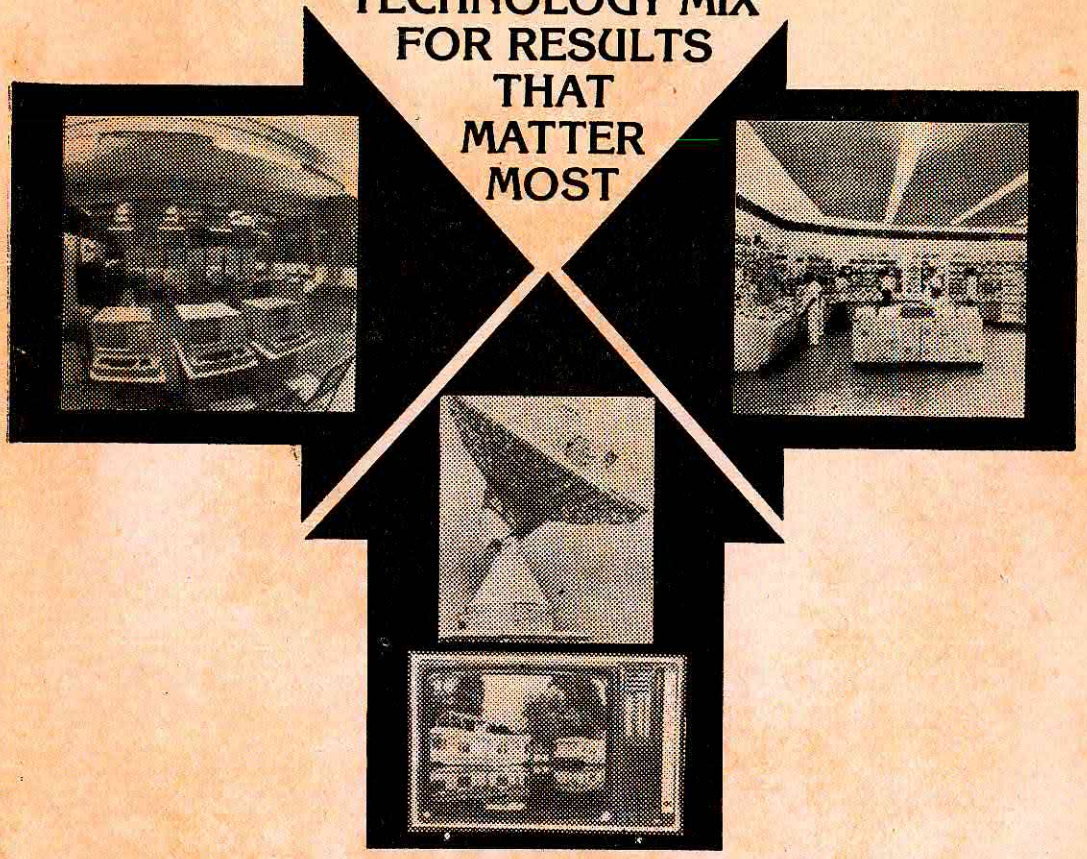

ECIL's thrust for the 80's and beyond is an excellent mix of those segments of technology that promise to dictate the shape of things to come.

Communications, Control Systems and Computers. The thrust areas of the future that ECIL concentrates on.

ECIL designed, developed and supplied related systems constitute a significant contribution to India's rapidly developing economy. Working to increase people's access to information, education and entertainment through ECTV and a wide range of antenna and communication systems;

Helping key sectors of industry—nuclear and non-nuclear—with their control instrumentation needs;

Facilitating better data management, and resource utilisation through advanced computer systems.

Besides, a large range of components and instruments that users in medicine, defence, labs and process industries have come to rely on.

ASP/ECIL/853A

A THRUST IN THE RIGHT DIRECTION

इलेक्ट्रानिक्स कारपोरेशन आफ इण्डिया लिमिटेड
Electronics Corporation of India Limited
Hyderabad 500 762

वैज्ञानिक (त्रैमासिक) R. No. 18862/70
दिल्ली, नयी दिल्ली, महाराष्ट्र, हिमाचल प्रदेश, राजस्थान व उ.प्र के शिक्षा विभागों द्वारा स्कूल व कॉलेजों के लिए स्वीकृत.

GOVERNMENT OF INDIA
Department Of Atomic Energy
NUCLEAR FUEL COMPLEX

The seamless steel tube plants of NFC are producing on a Commercial scale seamless stainless steel tubes/pipes and seamless Ball bearing steel tubes, meeting the most stringent specification under certification of Lloyds, IBR etc. for chemical, fertilizer, metallurgical, petroleum, Nuclear, power generation & roller bearings industries.

RANGE OF SS TUBES/PIPES

5 mm to 200 mm outer dia and 0.5 mm to 20 mm wall thickness in grade AISI 304, 304L, 304H, 310, 316, 316L, 316Ti, 321, 347, 347H, 410 or any other austenitic grade to customers requirement, under specification ASTM-A 213, 312, 269 or any other international Standards

RANGE OF ROLLER BEARINGS TUBES

20 mm to 200 mm outer dia with wall thickness as per customers requirement in grade SAE 52100

★ ★ ★

For all your requirement please write to :

Marketing Manager

Nuclear Fuel Complex

E. C. I. L. (P. O.)
HYDERABAD – 500 762
Phone : 851239, 852351, 852361

0155-6304 Grams : "NUCFUEL"

हिंदी-विज्ञान साहित्य परिषद के लिए डॉ. सत्य नारायण त्रिपाठी द्वारा संपादित तथा डॉ. उमेश चंद्र मिश्र द्वारा ज्ञान मुद्रा, वडाला तथा श्री रजनीश प्रिंटिंग प्रेस, चेंबूर में मुद्रित व प्रकाशित.